अनवरत विकास और जलवायु परिवर्तन

12
अध्याय

आर्थिक समीक्षा में यह नया अध्याय है जो अनवरत विकास और जलवायु-परिवर्तन से उभरी चुनौतियों को दर्शाता है। जमीन, जल, जंगल और हवा पर दबाव बढ़ता जा रहा है और वन्य पर्यावासों के क्षरण में तेजी आई है। ग्रहों का गर्म होते जाना भी एक प्रतिकूल प्रभाव है जिसके चलते मौसम उग्रतर होता जा रहा है। विज्ञान और बदलते मौसम के साक्ष्य भारत और विश्व दोनों को इन चुनौतियों से जूझने पर विवश कर रहे हैं। जून 2012 में रियो में आयोजित होने वाले पृथ्वी सम्मेलन में पूरे विश्व में काफी मात्रा में वहनीय विकास प्राथमिकताओं को चुना जाएगा। दिसम्बर, 2011 में डरबन बैठक ने जलवायु परिवर्तन को समुचित प्रतिक्रिया स्वरूप कुछ निर्देश नियत किए हैं और इसके निकट ही अप्रैल 2012 से ही बारहवीं पंच वर्षीय योजना भी शुरु हो रही है जिसमें अनवरत और समावेशित, कमत्तर कार्बन उत्सर्जन वाले विकास पथ को अपनाने की प्राथमिकता निर्धारित की जानी है।

12.2 सतत विकास के पथ पर भारत की अब तक यात्रा आत्मविश्लेषण और अनुष्ठान के सम्यक संतुलन द्वारा प्रशस्त रही है। इस कहानी का आगाज़ कदाचित 1980 और 1990 के आरम्भिक वर्षों से माना जा सकता है, जबकि आर्थिक सुधार, जो असाधारण रूप से तीव्र विकास दरों के संदर्भ में विशेषरुप से उत्प्रेरक तत्व रहा है और इसके साथ ही वह समय, जब पूरी दुनियां के सभी देशों ने मिलकर यह माना तथा महसूस किया तथा 1992 में रियो में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन जैसे मौकों पर पर्यावरण की बढ़ती चिन्ताओं के निवारण पर एकजुट हुए। पिछले दो दशकों में भारत का वृद्धिरत सकल घरेलू उत्पाद (सघउ अपूर्व रहा है, किन्तु इसी समय, इसके साथ ही मानव विकास सूचकांक (मा॰वि॰सू॰) के संदर्भ में भी भारत का स्थान असाधारण रहा है। पर्यावरण वहनीयता के ज्ञापन संकेतकों में इस विकास को देखा जा सकता है। (बॉक्स 12.1)। तथापि भारत द्वारा किए गए भारी विकास को कमतर करके आंकना भूल होगी क्योंकि भारत ने एक तरफ विकास न करते हुए धरातल पर प्रभावी नतीजों के साथ-साथ संतुलित विकास का ज्यादा सुविचारित रास्ता अपनाया है।

12.3 पर्यावरण से सम्बंधित प्रमुख चुनौतियां पिछले दो दशकों में और भी सघन हुई है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय (एमओईएफ) द्वारा पर्यावरण व्यवस्था पर वर्ष 2009 की रिपोर्ट में इस मुद्दे में भारत द्वारा भेजे जा रहे पांच प्रमुख चुनौतियों के साथ जोड़ कर देखा गया है। ये पांच प्रमुख चुनौतियां इस प्रकार से हैं जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, जल-सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और शहरीकरण प्रबन्धन हैं। जलवायु परिवर्तन प्राकृतिक परिस्थितिकी को प्रभावित करता है और भारत में इसका काफी मात्रा में प्रतिकूल असर होने की संभावना है खासकर कृषि, जिसपर देश की 58 प्रतिशत आबादी अपनी आजीविका के लिए निर्भर है, पर इसका खराब असर होने का अंदेशा है। हिमालय के ग्लेशियर, जो प्रमुख नदियों तथा भूजल पुनर्संचय के मुख्य स्रोत हैं, में पानी की कमी, समुद्र की सतह, जोकि कई तटीय शहरों बस्तियों के लिए भारत खतरा है, का बढ़ना है। जलवायु परिवर्तन बढ़ती हुई प्राकृतिक उग्र स्थितियों यथा तूफान, बाढ़ तथा सूखे के लिए भी जिम्मेदार है। आगे चलकर यही समस्याएं देश की खाद्य सुरक्षा और जल सुरक्षा को भी संकट में डालेंगी। भारत को शीघ्र ही अपनी तेजी से बढ़ती हुई ऊर्जा माप को पूरा करने की चुनौती का भी सामना करना होगा। अभी यह तेल आवश्यकताओं की 80 फीसदी आयात पर निर्भर है, ग्रामीण आबादी का एक भारी हिस्सा अभी भी ग्रिड या सक्षम आधुनिक ईंधन संसाधनों से नही जुड़ पाया है, और भारत की प्रति व्यक्ति ईंधन खपत का औसत 439 कि॰ग्रा॰ है जो विश्व की औसत ईंधन खपत 1688 कि॰ग्रा॰ से काफी कम है (योजना आयोग रिपोर्ट 2006)। घरेलू क्षेत्र में ईंधन की कमी इस क्षेत्र में कम विद्युत शक्ति से ही नहीं, बल्कि भोजन पकाने तथा रौशनी

बॉक्स 12.1 : भारत के पर्यावरण निष्पादन मानक

पर्यावरण निष्पादन की अद्यतन श्रेणी के अनुसार 132 देशों की सूची में भारत का 122वां स्थान है। वनों (21वां स्थान), मात्स्यिकी (39वां स्थान), और मौसम परिवर्तन (55वां स्थान) का संरक्षण करते हुए भारत का निष्पादन बेहतर रहा है। यहां हवा (132), कृषि (126) तथा जल संसाधन (122) की गुणता को खराब रेटिंग दी गई है। रेटिंग के इन मानकों के साथ-साथ, भारत की आंकड़ागत तथा प्रणालीविज्ञान से सम्बधित भी कतिपय समस्याएं है। कृषि क्षेत्र में दो उप-घटकों प्रतिबंधित कीटनाशकों एवं संरक्षण पर भारत के निष्पादन का गलत मूल्यांकन किया गया है, भारत ने करीब एक दर्जन कीटनाशकों को अपने यहां प्रतिबंधित, बन्द कर दिया है और कृषि क्षेत्र में उसका संरक्षण नकारात्मक है। पर्यावरण सम्बंधी स्वास्थ्य संकेतक 1-5 वर्ष के शिशुओं की मृत्यु दर को बहुत ज्यादा महत्व देते है जिसके कारण विषमताएं अतिरंजित हो जाती हैं। जन्म सूचकांक पर बृहदत्तर जीवन संभाव्यता एक पूर्वाग्रह हो जाता है। तीन अन्य समायोजन, जैव-विविधता, ऊर्जा और जल के लिए अपेक्षाकृत ज्यादा उपयुक्त सामान्यीकरण किया जाना चाहिए। कुल मिलाकर ये संचयी प्रभाव सभी देशों के बीच जाकर भारत की समग्र रैंकिंग को सुधार सकते हैं। प्रणाली विज्ञान से सम्बंधित इसका दूसरा मसला यह है कि पर्यावरणिक निष्पादन से आय को कैसे अलग किया जाए। यद्यपि ''डिस्टेंस टु टार्गेट'' प्रणाली कुछ हद तक मददगार है किन्तु यह समस्या का पूरी तरह से निराकरण नहीं करती, धनी देश अभी भी बेहतर निष्पादन करने की स्थिति में है (क्योंकि वे इस प्रणाली को अफोर्ड कर सकते हैं) और आर्थिक विकास अभी भी अनवरत वहनीयता की महत्वपूर्ण चालक शक्ति बनी हुई है।

इस पर भी ईपीआई प्रक्रिया कुछेक क्षेत्रों में उपयोगी हो सकती है। बांग्लादेश (सेन और ट्रेज़ 2011) की भांति हमें भी सार्वजनिक स्वास्थ्य और पर्यावरणीय तौर पर निरोग्य शिशु मृत्युदर पर बेहतर काम करना होगा। इसकी अहम समस्या श्वास नली को प्रभावित करने के वायुवाहित 2.5 माइक्रोन से भी छोटे सूक्ष्मकणों (पीएम) की चेतावनी के स्तर तक जा पहुंचने की है। हाल ही में दिल्ली में पीएम 2.5 स्तर के कण देखे गए हैं जिन्होंने बीजिंग को भी पीछे छोड़ दिया है। बढ़ते हुए डीजल चालित परिवहन, बिजलीघरों से उत्सर्जित धुआं, कृषि अवशेषों को ईंधन के तौर पर जलाने और उप हिमालयी शीत विपरिवर्तन आदि प्रमुख कारण है जो इसके लिए दोषी हैं। इन समस्याओं से निजात पाने की दृष्टि से वन एवं पर्यावरण मंत्रालय (एमओईएफ) ने अपनाए जाने वाले विकल्पों की एक सूची सुझाई है। इन विकल्पों में विनियमन अर्थात् अवशेषों, बिजलीघरों के ईंधन पर रोक, कीमतें (डीजल तथा निजी परिवहन के लिए अलग कीमते) तथा सार्वजनिक परिवहनों में निवेश द्वारा बढ़ावा देना आदि शामिल है लेकिन ये प्रयास नाकाफी हैं।

प्रति व्यक्ति आय और ईपीआई सूचकांक

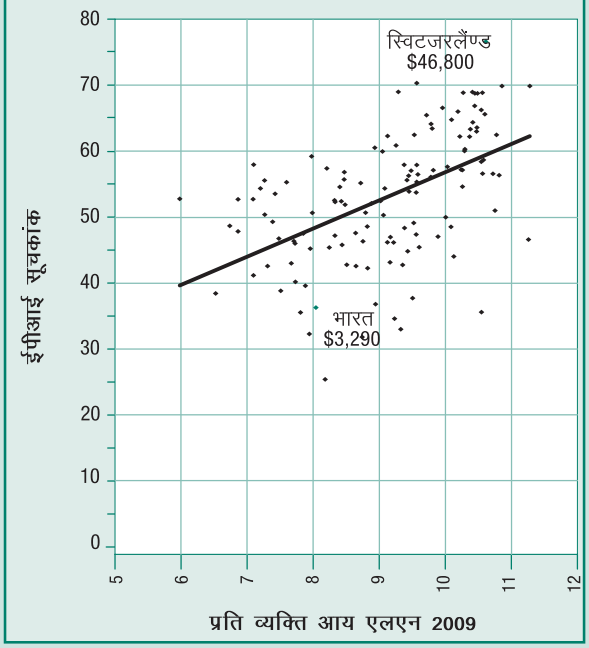

5 वर्ष से नीचे मृत्युदर (1990–2010)

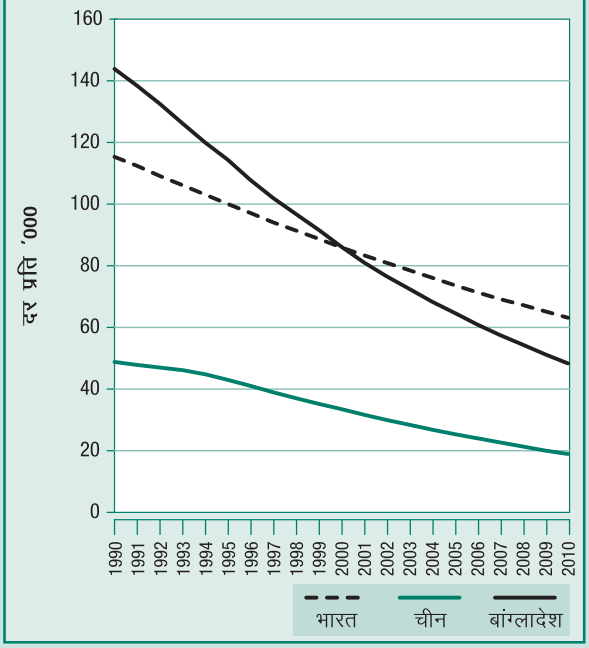

स्रोत: ईपीआई 2012 और विश्व विकास संकेतकों से स्टाफ अनुमान एवं आंकड़ें।

संदर्भ: (1) ईपीआई 2012, पर्यावरण निष्पादन सूचकांक तथा प्रायोगिक रूझान पर्यावरण निष्पादन सूचकांक (www.epi.yale.edu) (2) भारत में प्रमुख कार्बनिक प्रदूषक (पीओपीस) देशगत स्थिति आईपीईपी, 2006। (3) गिरी विकास अध्ययन संस्थान, लखनऊ में भारतीय कृषि हेतु कृषि विपणन तथा मूल्यन सब्सिडी पर योगेशबन्धु 2010 रिपोर्ट। (4) बिल मार्टिन एवं किम एन्डरसन, अक्तूबर 2010, व्यापार विरूपण तथा खाद्य मूल्य उमड़ाव, विश्व बैंक तथा एडलेड विश्वविद्यालय के सौजन्य से। (5) विश्व स्वास्थ्य संगठन 2003, बाल स्वास्थ्य के पर्यावरणीय स्वास्थ्य, 2003 के सुधार के संकेतक, मेकिंग ए डिफरेसेंज। (6) अमृत्यसेन तथा जीन ड्रेज़ 2011 पुटिंग ग्रोथ इन इट्स प्लेस, आउटलुक 14 नवम्बर। (7) क्रिस्टोफ बॉहरिंगा एंड पैट्रिक जोशेम, 2005 मैसरिंग द इम्मैजेरेब्ल्स ए सर्वे ऑफ संसटेनेबल इडिसीज सेंटर फॉर यूरोपियन इकॉनॉमिक रिसर्च मैनेहम। (8) मुखर्जी एंड डी चक्रबर्ती, 2009 डू नॉन इकॉनॉमिक फैक्टर्स इनफ्लुएंस एनवारमेंटल परफारमेंस ऑफ ए कन्ट्री? रीसेंट एफीरिकल एविडेंस मिमेओ।

के लिए परम्परागत ईंधन के साधनों यथा मिट्टी तेल, मोमबत्ती पर निर्भर रहने से भी स्पष्ट होती है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वे संगठन (एनएसएसओ), सर्वे 2004-05 के मुताबिक, 45 प्रतिशत ग्रामीण आबादी केरोसिन अथवा प्रकाश के लिए मोमबत्ती जैसे सस्ते ईंधनों पर निर्भर रहना पड़ता हैं और प्राथमिक रुप से लगभग 84 प्रतिशत ग्रामीण आबादी भोजन पकाने के लिए ईंधन के तौर पर बायोमास मिश्रणों यथा जलावन लकड़ी, गोबर के कन्डों तथा कृषि अविशिष्टों का उपयोग करती है। अंततः शहरीकरण बहुत तेजी से बढ़ रहा है जोकि वहनीय आवासन, खाद्य पेयजल की आपूर्ति, स्वच्छता ठोस कचरा प्रबन्धन, परिवहन तथा वायु शुद्धता जैसे के नए मसले भी उठ रहे हैं। इन क्षेत्रों में मदद के लिए मूल्यों, विनियमनों और करों को अभिहित किया जा सकता है।

चित्र 12.1 अनवरत विकास के तीन संक्षिप्त परिणाम संकेतक

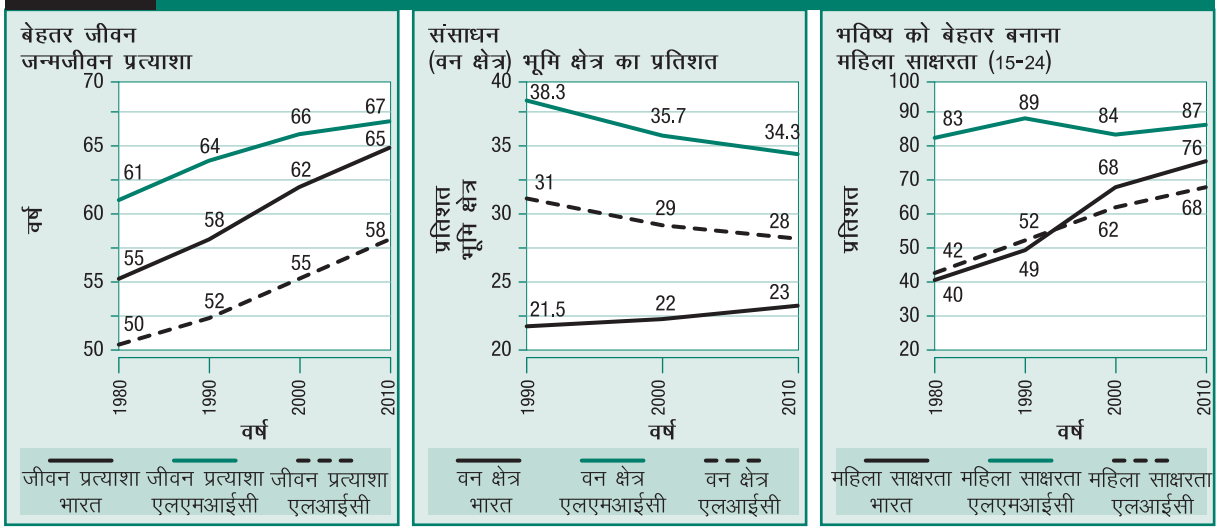

टिप्पणी: एलएमआईसी-कमत्तर और मध्य आय वाले देश; एलआईसी-कम आय वाले देश

12.4 इसकी तरफ सामुदायिक स्तर पर की गई प्रगति का भी एक भाव है जिसमें वहनीय विकास के संदर्भ में भारत ने उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। इस परिप्रेक्ष्य में सारांशत: तीन संकेतक हैं। पहला संकेतक जीवन प्रत्याशा है, जहां भारत ने एक दशक की उपलब्धियां हासिल कर ली हैं तथा यह संकेतक सामाजिक न्याय के साथ-साथ आर्थिक बेहतरी का भी सर्वभौमिक संकेतक है। भूमि प्रयोग के दबाव के बावजूद फॉरेस्ट कवर में भी इजाफा हुआ है। जोकि पर्यावरणीय वहनीयता का प्रमुख मापक है। उपग्रह से प्राप्त आंकड़े पुष्टि करते है कि भारत न केवल वनों के विनाश को रोकने के लिए सक्षम है बल्कि इसका फॉरेस्ट कवर क्षेत्र भी 1990 और 1910 के बीच बढ़ा है। भारत उन चुनींदा विकासशील देशों में से एक है जहां पिछले 20 वर्षों में वनाच्छादित क्षेत्रों में वृद्धि हुई है और वृद्धि अभी भी जारी है, यद्यपि 2011 में अद्यतन आंकड़ों में थोड़ी कमी देखी गई हैं। तीसरा मुख्य संकेतक युवा महिलाओं में शिक्षा का प्रसार है, जो कि भावी पीढ़ी की बेहतरी का एक प्रमुख संसूचक है (चित्र 12.1)। इन तीनो स्तरों पर देखें तो भारत ने सार्वभौमिक औसत की खाड़ी को पूरी कुशलता के साथ पार कर लिया है हालांकि यह भी सत्य है कि इसे और बेहतर तरीके से भी हासिल किया जा सकता था। इसके अलावा इसके सेवा क्षेत्रों की सफलता विकास आधारित है। 1990 से गतिमान अर्थव्यवस्था मुख्य रुप से तबसे कृषि तथा सेवा-उन्मुखी विनिर्माण पर निर्भर करती है। भारत के सघल घरेलू उत्पाद (सघउ) में इस क्षेत्र का अंशदान अनुमानत: 1980-81 में 38 फीसदी था जोकि 2010-11 में बढ़कर 57.7 फीसदी हो गया है।

12.5 इसके अलावा अलग-अलग दृष्टिकोणपरक कई अनुभव भी प्राप्त हुए हैं जोकि भविष्य के लिए संस्थानिक विकास की आधारशिला को मजबूती देंगे। पर्यावरणीय सरोकारों की दृष्टि से देखें तो भारतीय नीति और नियोजना के निर्धारण क्रम में वहनीय विकास एक आवर्ती सिद्धांत रहा है। 1985 से निरन्तर बढ़ती जवाबदेहियों तथा दायित्वों के साथ प्रतिबद्ध और स्वायत पर्यावरण एवं वन मंत्रालय हमारे देश में कार्यरत है। संविधान स्वयं वह स्रोत है जहां से कई विशिष्ट नियम व कानून नि:सृत हैं। बहुलकारक, बाजार तथा असंख्य सरकारी कार्यक्रम तथा नीतियां भी इस कार्य में बराबर मददगार बने हुए है। भारतीय संविधान तथा परवर्ती वर्षों के दौरान उसमें हुए संगत संशोधन भारत में अनवरत और वहनीय विकास को सुदृढ़ आधार प्रदान करते हैं। सतत विकास के आधार स्तम्भ भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों की गारन्टी में निहित हैं जिसने देश में सामाजिक न्याय की रूप-रेखा निर्धारित की हुई है। संविधान की धारा 21 जीवन का अधिकार देती है जो कि न्यायपालिका द्वारा अनुमत व व्याख्यायित व्यवस्था के अनुसार स्वच्छ पर्यावरण में रहने के अधिकार, आजीविका के अधिकार, गरिमापूर्वक जीवनयापन के अधिकार तथा इससे सम्बद्ध असंख्य अधिकारों से जुड़ा हुआ है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 में सभी विकासपरक गतिविधियों में पर्यावरण सम्बन्धी सरोकारों को मुख्यधारा में लाने का पूरा-पूरा प्रयास किया गया है। भारत सरकार अपनी विविध नीतियों के माध्यम से सभी विकासपरक प्रक्रियाओं में पारिस्थितिकी सरोकारों को पर्याप्त स्थान दे रही है ताकि पारिस्थितिकी तथा पर्यावरण को कोई स्थायी अथवा दीर्घकालिक नुकसान पहुंचाए बिना ही आर्थिक विकास के लक्ष्य को हासिल किया जा सके। इस दिशा में विद्यमान चुनौतियों में ईंधन के तौर पर निर्धन देश की निरन्तर बढ़ती ईंधन जरूरतों को पूरा करना तथा त्वरित शहरीकरण और ज्यादा रोजगारपरक विनिर्माण के साथ इन चुनौतियों तक अभी भी पहुंच का सीमित होना है।

12.6 विकास की पर्यावणिक लागत को ज्यादा उपयुक्त तौर पर ध्यान में रखने और राष्ट्रीय आय के सृजन में प्राकृतिक संसाधनों के नुकसान का अनुमान लगाने के लिए ग्रीन नेशनल एकाउन्टिंग प्रणाली लागू करते हुए सांख्यिकी एवं कार्यान्वयन मंत्रालय द्वारा 2010 में एक नयी प्रक्रिया अमल में लाई गई है। केंद्रीय सांख्यिकीय कार्यालय (सीएसओ) द्वारा 1997 से विशद पर्यावरणीय आंकड़े

प्रकाशित किए जा रहे हैं। उम्मीद है कि ग्रीन हाउस डॉमेस्टिक उत्पाद (जीडीपी) के अनुमान के लिए मानक राष्ट्रीय एकाउन्ट में प्राकृतिक संसाधनों के भण्डारण में हो रहे अवक्षय को राज्य के स्तर पर तथा राष्ट्रीय स्तर पर समग्रत: पांच वर्षों में निकाल लिया जाएगा। राज्यों के स्तर पर प्रायोगिक परियोजनाएं पहले ही आरम्भ हो चुकी हैं और एक उच्चस्तरीय परामर्श समूह भी गठित कर दिया गया है। आगे चलकर यह सूचना विकास प्रक्रिया में वहनीय तथा अनवरत विकास को समेकित करेगी। यहां यह उल्लेखीय होगा कि विकास की हानियों तथा इसके लाभों का समान बंटवारा भी एक महत्वपूर्ण बात है। जिस सीमा तक प्राकृतिक संसाधनों का अपक्षय रूपान्तरित होता है उसी हद तक मानव पूंजी, विशेषकर प्राकृतिक पारिस्थितिकी प्रणाली पर निर्भर निर्धनतम समुदायों की समृद्धि व उसकी क्षमताओं में क्रमिक सुधार होगा, समावेशन और वहनीयता का ज्यादा संतुलित और सावधान अनुमापन एकजुट होकर विकास के विकल्पों तथा निर्णयों में इजाफा करेगा। हरित विकास को पारम्परिक उन्नति की तीव्र दरों, जोकि निर्धनतम आबादी की आधुनिक ऊर्जा जरूरतों जैसी ही ज्यादा समावेशी हैं, को आत्मसात करने की जरूरत पर पूरा ध्यान देना होगा। उदाहरणस्वरूप अत्यन्त गंदे कोयले को जलाकर के साफ-सुथरी बिजली में तब्दील करना एक वैध विकल्प को दर्शाता है बशर्ते इस प्रक्रिया से होने वाले लाभों के संवितरण में अत्यन्त गरीबों, विद्युत कनेक्टिविटी से न जुड़ी बसावटों, घरों की ऊर्जा सम्बन्धी जरूरतों का पूरा ध्यान रखा जाए और ऐसा न हो कि यह लाभ सिर्फ अमीर तथा धनी आबादियों, बत्तियों, चाहे वे ग्रामीण हो या शहरी, को पहुंचे। तदनुरूपी तौर पर यही तर्क पूरी दुनियां पर लागू होता है।

12.7 इसीलिए महत्तर पर्यावरणीय वहनीयता को बरकरार रखते हुए भारत को अपनी आर्थिक बेहतरी से सम्बन्धित जरूरतों के लिए विद्यमान संसाधनों को ज्यादा तलाशने (बचाने) और उन्हें युक्तिपूर्ण तरीके से इस्तेमाल करने (खर्च करने) की जरूरत होगी। व्यापक आधारयुक्त आर्थिक और सामाजिक विकास ही इसका अंतिम उत्तर है। ऊर्जा तथा अन्य संसाधनों की कीमतों को आर्थिक आधार पर तय किए जाने से ही विकास के ज्यादा वहनीय और सतत् मार्ग की तरफ बढ़ने में निर्णायक मदद मिलेगी (बॉक्स 12.2)। नई प्रौद्योगिकी महत्वपूर्ण हैं, ज्यादा निजी क्षेत्र में, किन्तु सामाजिक न्याय के चलते अभी कई क्षेत्रों में सार्वजनिक व्यय को बढ़ाए जाने की जरूरत अभी बनी हुई है। तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था के लिए ऊर्जा-प्रबन्धन की जरूरतें ही जलवायु-प्रदूषण की दिशा में भारत द्वारा किए जा रहे स्वैच्छिक प्रयासों और प्रतिक्रियाओं की मूल प्रचालक होंगी।

12.8 भारत ने अपने विकास के मार्ग में ऊर्जा सघनता घटाने की शपथ ली है। इसके लिए ग्लोबल तौर पर शेयर किए गए यूरोपीय देशों के भार को प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन और इस प्रकार ग्लोबल वित्तपोषण के संदर्भ में मापा गया है ताकि पहले से विकसित देश विकासशील दुनियां की कीमत पर विश्व में विद्यमान कार्बन स्पेस का पूरा-पूरा उपयोग न करें। हाल ही में डरबन प्लेटफार्म निर्णयों में विकासशील देशों की आवश्यकताओं की बलि चढ़ाए बिना ही ग्रीन हाउस गैसों (जीएचजी) उत्सर्जन को घटाने और एक (खगोलीय) ग्लोबल हरित जलवायु कोष (जीसीएस) जिससे ग्लोबल वित्त पोषण का आश्वासन दिया गया है, के गठन के लिए उत्तर 2020 उपायों को भी शामिल किया गया है। जीसीएफ का तत्काल और त्वरित कार्यान्वयन (गठन) वित्तीय समर्थन पर विकसित देशों की प्रतिबद्धता का सबूत होगा।

जलवायु परिवर्तन

12.9 जलवायु परिवर्तन एक ग्लोबल पर्यावरणीय समस्या है जोकि घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर सघन राजनीतिक ध्यान आकृष्ट करती रही है। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्रों के आधारभूत सम्मेलन (यूएनएफसीसीसी) ''जलवायु परिवर्तन'' को मौसम या जलवायु में देखे जाने वाले किसी ऐसी तब्दीली या बदलाव से परिभाषित करता है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव-गतिविधियों को इस प्रकार से प्रभावित करता है कि वह ग्लोबल वातावरण की संरचना के नैसर्गिक संघटन में छेड़-छाड़ करता है और इसके अलावा जो तुलनीय समय अवधियों के दौरान

बॉक्स 12.2 : क्या भारत में डीजल का दाम बहुत कम हैं?

डीजल एक मुख्य मद है। हालिया वर्षों में डीजल के मूल्य का समायोजन इसकी अन्तर्राष्ट्रीय कीमतों के अनुसार किया जाता रहा है और इस पर बजटीय सब्सिडी भी दी जाती है। जबकि इसी समय नियंत्रित की गई ये कम कीमतें और सब्सिडियां डीजल के दुरुपयोग तथा इसके अनियंत्रित उपयोग यथा लग्जरी स्पोर्ट्स यूटीलिटी वाहनों (एसयूटीज़), ऊर्जा असुरक्षित देश में आयात बढ़ाने तथा भारी प्रदूषण कारकों के लिए प्रोत्साहन की वजह भी बनती है। क्योंकि डीजल एक गंदी ऊर्जा है। डीजल ब्लैक सूट तथा विविक्त कणों को वायुमण्डल में घोलने वाला सबसे बड़ा कारण है तथा प्रकारान्तर से यह अस्थमा, कैंसर तथा हृदयरोगों का सबसे बड़ा कारण भी है। दूसरी तरफ राजनीतिक, आर्थिक गलियारों से यह तर्क दिए जाते हैं कि सार्वजनिक वाहनों के लिए डीजल पूरी दुनियां में व्यापक रूप से प्रयुक्त किया जाने वाला ईंधन है, बजटीय सब्सिडियां केंद्रीय तथा राज्यों के मूल्य वर्धित करों (वैट), उत्पाद तथा बिक्री करों द्वारा प्रति संतुलित की जाती हैं और अंतत: जब निम्नतर क्रय शक्ति सम्यता के लिए इसे समायोजित किया जाता है तो भारत में इसकी कीमतें बढ़ जाती हैं। सभी स्थिति में क्या इन तर्कों का कोई मतलब रह जाता है? इसकी जांच का एक तरीका है कि भारत में डीजल की कीमतों की आय देशों की डीजल कीमतों से तुलना करें और इसमें से पीपीपी तथा इसी प्रकार सापेक्ष ऊर्जा बहुलता को समायोजित करें। अब अन्य सभी बातें समान रहने पर तेल निर्यातक देश (यथा मध्यम एशियाई) अथवा सापेक्ष रूप से डाइर्वसीफाइड (रूपान्तरित) ऊर्जा बहुलता वाले देश (यथा कनाडा और अमरीका ऊर्जा असुरक्षित देशों (यथा भारत) के मुताबिक अपने घरेलू दामों को कमतर रख सकते हैं। यह चित्र दर्शाता है कि वस्तुत: केवल इस प्रकार के अनुमानित सम्बध ही रखे जा सकते हैं किन्तु इसके कई कारण हो सकते हैं। 2010 में भारत के लिए डीजल के दाम अनुमान से 20 प्रतिशत नीचे थे तबसे डीजल का ग्लोबल दामों में 45 प्रतिशत वृद्धि (9010 में प्रति बैरल 80 अमरीकी डॉलर के मुताबिक 118 अमरीकी डालर) होने के कारण यह अन्तर दुगना हो गया है। जबकि घरेलू कीमत समायोजन अनुपालित नहीं हुआ है। डीजल की कीमतों को भारी पैमाने पर नए सिरे से समायोजित किए जाने की जरूरत है। उदाहरण के तौर पर जैसे हाल ही में चीन ने किया है। प्रदूषण तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य की लागत पर सब्सिडी देना सही नहीं है। कीमतों को कम बनाए रखने में कोई तर्क नहीं है खासकर तब जबकि क्रयशक्ति साम्यता आयों के लिए इसे समायोजित करना हो। राजमार्गों अधिक प्रभारित किया जाना तथा वाहन करों की वसूली एक रास्ता हो सकता है जैसाकि सिंगापुर में किया जा रहा है।

जलवायु की विविधता में भी प्रतिकूल प्रभावित करता हो। जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभावों में विश्व का औसत तापमान बढ़ना, हिम नदों का पिघलना, नदियों, जलधाराओं का मार्ग बदलना व सूखना तथा समुद्री तापमान का बढ़ना और समुद्री सतह का तापमान का बढ़ना और समुद्री सतह का ऊपर बढ़ना आदि शामिल है। जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान के लिए जरूरी प्रयासों में एक तरफ अगर जीएचजी गैसों के उत्सर्जन में जहां तक मुमकिन हो कमी लाना है, वहीं इसी तरफ सामाजिकी तथा आर्थिकी के विविध क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से बचने के क्रम में अनुकूल क्षमताओं का विनिर्माण करना है और विकासशील देशों की स्थिति में प्रौद्योगिकी तथा वित्त द्वारा सहायक उपायों को अपनाया जाना होगा।

जलवायु परिवर्तन का विज्ञान तथा अर्थशास्त्र

जलवायु परिवर्तन का विज्ञान

12.10 वायुमण्डल धरती पर जीवन को संभव बनाने वाले महत्वपूर्ण गतिविधियों को बनाए रखता है। सूर्य सौर ऊर्जा को पृथ्वी पर फैलाता है और इस ऊर्जा का एक भारी हिस्सा (लगभग एक तिहाई) अंतरिक्ष में वापस परावर्तित हो जाता है और शेष ऊर्जा पृथ्वी की सतह और वायुमण्डल द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। कार्बन डाईआक्साइड जैसी जीएचजी तथा जलवाष्प इस ऊष्मा को थोड़े बहुत पृथ्वी की सतह पर पुनः पुनः उत्सर्जित कर देती है। यदि वे इस उपयोगी क्रिया का निष्पादन नहीं करते तो, ज्यादातर ऊष्मा-ऊर्जा पलायित हो जाती है, धरती को शीतल बनाएगी और यह स्थिति पृथ्वी पर जीवन की वहनीयता के अनुकूल होगी। इस प्रकार वायुमण्डल प्राकृतिक गैस प्रभाव का सृजन करता है जो धरती पर जीवनानुकूल स्थितियों को बनाए रखता है। तथापि लगभग 150 वर्ष पहले, जब से औद्योगिक क्रांति हुई है तब से वायुमण्डल में जीएचजी गैसों की महत्वपूर्ण मात्रा मानव द्वारा की गई गतिविधियों से ही बढ़ी है।

12.11 जलवायु परिवर्तन की सबसे प्रमुख वजह वायुमण्डल में जीएचजी गैसों का बनना है। जीएचजी वे गैसें हैं जो कि अल्प तथा दीर्घ दोनों की कालों के लिए ग्लोबल वार्मिंग यानि धरती के गर्म होते जाने के लिए जिम्मेवार हैं। वायुमण्डल में इसका प्रतिरोध समय कुछ घण्टों, हफ्तों, महीनों और वर्षों से लेकर कई शताब्दियों तक अलग-अलग कालावधि का हो सकता है। किसी जीएचजी गैस की गर्म करने की क्षमता कार्बन डाइआक्साइड के रूप में मानक मानी जाती है और मीथेन के लिए यह मोटे तौर पर इक्कीस गुना तथा फ्लोरोकार्बन्स के लिए यह कई हजार गुना अधिक होती है। जलवायु परिवर्तन पर अन्तर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) के अनुसार कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) मीथेन (CH_4) तथा नाइट्रस ऑक्साइड (NO_2) का संघनीय वायु मण्डलीय दबाव 1750 से लेकर अबतक की मानवीय गतिविधियों के कारण ही हुआ है और अब यह औद्योगिक पूर्व स्तरों को भी तेजी से पार करता जा रहा है। ग्लोबल तौर पर कार्बन डाइऑक्साइड की वृद्धि मुख्य रूप से फॉसिल ईंधन के इस्तेमाल और भू-उपयोग में बदलाव के कारण हुआ है। जबकि मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड के मामले में यह वृद्धि मुख्यतः कृषि के कारण है। आईपीसीसी (आईपीसीसीएआर4 2007) की चतुर्थ आकलन रिपोर्ट के अनुसार पूर्व औद्योगिक मान के 278 पार्ट्स प्रति मिलियन (पीपीसी) से लेकर 2005 में 379 पार्ट्स प्रति मिलियन (पीपीएम) के स्तर तक कार्बन डाईऑक्साइड का संघनन हुआ है और इसके कारण औसत ग्लोबल तापमान 0.74° सें॰गें॰ तक बढ़ा है। अनुमान बताते हैं कि यह ग्लोबल वार्मिंग बरकरार ही नहीं रहेगा अपितु तेजी से बढ़ेगी।

बॉक्स 12.3 : आईपीसीसी एआर 4, 2007 के मुख्य निष्कर्ष

- पृथ्वी के गर्म होते जाने की जलवायु प्रणाली अनिश्चित है।
- कार्बन डाई ऑक्साइड का वायुमण्डल में संघनन 1750 में 280 पीपीएम था जो बढ़कर 2005 में 379 पीपीएम हो गया है।
- 1961-90 के दौरान तापमान, समुद्र सतह और उत्तरी हिम क्षेत्रों में प्रत्यक्ष बदलाव देखे गए हैं जोकि बढ़ते हुए तापमान, समुद्र की सतह के बढ़ने तथा हिम क्षेत्रों के सिकुड़ने के आधार बन रहे हैं।
- 1961-2003 के दौरान पूरी दुनिया में समुद्र स्तर प्रतिवर्ष 1.8 मि.मी. बढ़ा है।
- सन 1850 के बाद बारह में से ग्यारह साल 1995-2006 दुनियां के सबसे गर्म वर्षों के रूप में दर्ज किए गए हैं।
- दोनों ही ध्रुवों में ग्लेशियर तथा हिमाच्छादित पर्वतों में बर्फ को घटते हुए दर्ज किया गया है बार-बार गर्म हवा के थपेड़ों, सूखे भारी वर्षा तथा बाढ़ का आना-जाना दर्ज किया गया है।
- जलवायु में अनुमानित परिवर्तन दर्शाता है कि 2100 तक दुनिया 1.8° से. ग्रे. से लेकर 4.0° सें॰ग्रे॰ समुद्र सतह का 0.18 और 0.59 मीटर तक बढ़ जाने का अंदेशा है।

12.12 आईपीसीसी4 ने ज्यादा दृढ़ता से जलवायु परिवर्तन का वैज्ञानिक आधार स्थापित व स्पष्ट किया है और इसी संदर्भ में जलवायु के प्रभावों से जुड़े सरोकारों को उठाया है आईपीसीसी4 के प्रमुख निष्कर्ष बॉक्स 12.3 मे दिए गए हैं। आईपीसीसीएआर 5 पर कार्रवाई चल रही है तथा वैज्ञानिक संसूचना तथा अविरल विचारण तथा संज्ञान के लिए उसके निष्कर्षों को शीघ्र की सार्वजनिक किया जाएगा। आईपीसीसी ने विविध विशेष रिपोर्ट प्रभावित की है। 2011 में, इसने अत्यन्त उग्र प्राकृतिक घटनाओं तथा आपदाओं के जोखिम प्रबन्धन के बारे में अग्रिम जलवायु परिवर्तन अनुकूलन पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की है। जिसमें कई महत्वपूर्ण और अहम निष्कर्ष शामिल किए गए हैं।

12.13 जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ आत्यन्तिक उग्रतर घटनाओं/आपदाओं, बाढ़-सूखे आदि की किस्मों, उनकी बारम्बारताओं और सघनता में भी बदलाव होता जाएगा। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन में पारिस्थितिकी, जोकि सामाजिक-आर्थिक विकास के चलते पहले ही भयावह दबाव और तनाव से जूझ रहीं हैं, पर अतिरिक्त रूप से ध्यान दिए जाने की जरूरत है। चूंकि राजनीतिक तथा संसाधन गत दोनों ही संदर्भों में जलवायु परिवर्तन का समाधान खोजना एक प्रमुख चुनौती है। अतः इसके समाधान के लिए घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर प्रयास किए जाने की जरूरत है।

अर्थशास्त्र विज्ञान के पीछे चलता है

12.14 इस बात के अकारण साक्ष्य मिले हैं तथा बढ़ते हुए परिणामात्मक जोखिमों के आकलनों से यह तथ्य सामने आया है कि मानव गतिविधियां वायुमण्डल की संरचनात्मक बुनावट और बनावट की नैसर्गिकता में छेड़छाड़ कर रही हैं। इस अनुभव से चुनौती तथा इससे सम्बद्ध संसाधनों के निवारण के लिए पूर्व निर्धारित कतिपय अग्रिम उपाय सामने आए हैं जोकि आगे चलकर अर्थव्यवस्था के अध्ययन में शामिल किए गए हैं। विज्ञान बताता है कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव प्रकृति: गंभीर और व्यापक असर वाले हैं जबकि अर्थशास्त्र के नतीजे बताते हैं कि वे अन्य बाजार की असफलता और आर्थिक गतिकी से कार्य करते हैं तथा इस क्रम में सम्मिश्रित नीतिगत मामलों को उठाते हैं। संक्षेप में कहें तो जलवायु परिवर्तन एक ग्लोबल और आत्यन्तिक रूप से जीएचजी के उत्सर्जन से जुड़ा मसला है जिसके अपने दीघकालिक स्थायी तथा एक स्तर से बाहर के और अपरिवर्तनीय असर होते हैं। इन उत्सर्जनों की मौजूदा तथा भावी पीढ़ियों को एक लागत अदा करनी होती है जिसकी भरपाई इन उत्सर्जन करने वालों के द्वारा कभी भी पूर्ण तरह से नहीं की जा सकती। इसलिए जरूरी यह है कि चूंकि बाजार अकेले इन नाकामियों से नहीं निबट सकता है लिहाजा इस दिशा में पर्याप्त हस्तक्षेप के लिए नीतियां बनाना भी जरूरी है।

बॉक्स 12.4 : अन्तर एवं आन्तरिक पीढ़ीगत साम्यता

साम्यता के दो आयाम होते हैं। अन्तरपीढ़ीय तथा आन्तरपीढ़ीय। अर्थात पीढ़ी दर पीढ़ी आयाम और एक पीढ़ी के भीतर के आयाम। जलवायु परिवर्तन के संदर्भों में देखें तो अन्तपीढ़ीय अर्थात पीढ़ी दर पीढ़ी-फैलने वाले संदर्भों में पूरी दुनिया के जीएचजी या आवसीय उत्सर्जन की भागीदारी, जीएचजी उत्सर्जन के अधिकारों, इसमें निहित लागतों तथा इसके लाभों और मौजूदा पीढ़ी ही नही अपितु बाद में आनेवाली परवर्ती पीढ़ियों तथा पूरी प्रजाति के बीच फैलने वाले प्रभावों को शामिल किया गया है जबकि आन्तर पीढ़ीय संदर्भों में विद्यमान पीढ़ी के सदस्यों के बीच में संसाधनों की उपयोगिता के आबंटन सम्बन्धी मसले आते हैं।

अमीरी और गरीबी के साथ पर्यावरणीय अवनति का दुष्चक्र

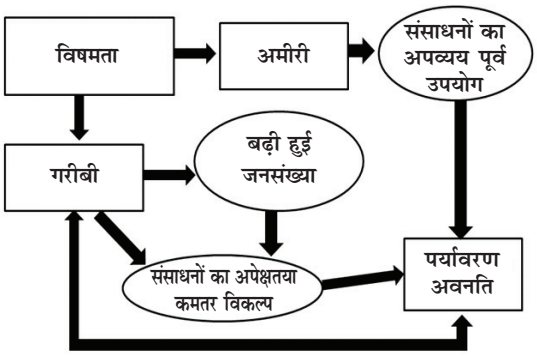

स्रोत : वॉलोनगौंग विश्वविद्यालय, न्यू साउथवेल्स, ऑस्ट्रेलिया

प्राय: जलवायु परिवर्तन के सिलसिले में होने वाली बहसों में अन्तर पीढ़ीगत साम्यता पर बहुत जोर दिया जाता है। उन्नति तथा गरीबी उन्मूलन में विकासशील देशों की शिक्षा पर कोई सवालिया निशान नहीं लगाया जा सकता। जलवायु परिवर्तन के लिए प्रमुख जवाबदेह कारक होने के बावजूद, विकसित देश जीएचजी गैसों के अपने उत्सर्जन को स्थिर करने व घटाने और अशक्त विकासशील देशों के जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के क्रम में उन्हें वित्तीय और प्रौद्योगिकीय मदद मुहैया कराने की दृष्टि अपने पिछले (ऐतिहासिक) और मौजूदा उत्सर्जन को रोकने की वचनबद्धता के बावजूद कुछ खास नही कर रहे हैं। लागत-लाभ विश्लेषण के लिए सामाजिक छूट दरें महत्वपूर्ण होती हैं। ये आज की बेहतरी बनाम भविष्य के बेहतर समाजों के सापेक्ष मूल्यांकन में परिलक्षित होने हैं।

12.15 यह अन्तर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन की विमर्श व्यवस्था का प्रस्थान बिंदु बनता है जो पूरे विश्वस्तर पर समन्वित और सुनियोजित नीतिगत योजना की जरूरत का सुझाव देता है। क्योंकि जीएचजी के टनों का बढ़ता हुआ प्रभाव स्वायत्त है क्योंकि दुनियां में जहां कहीं भी उत्सर्जन होता है प्रभावित यह समग्रत: पूरे पर्यावरण को करता है। यह विशिष्टता महत्वपूर्ण विशेषताओं वाले कतिपय जलवायु परिवर्तनों, नीतिगत दिशा-निर्देशों नामत: ऐतिहासिक दायित्वबोध अन्तर तथा आभ्यन्तरिक पीढ़ीगत (जेनरेशनल) साम्यता (बॉक्स 12.4) का खाका तैयार करती है। अपेक्षित नीति को परिणामों के संवितरणों को पीढ़ीगत रूप से इस तरह से संतुलित ढंग से बांटना चाहिए कि मौजूदा पीढ़ी के साथ-साथ इसका एक संदाय भावी पीढियों के लिए भी निर्धारित किया जा सके। भावी पीढ़ी को बेहतर जीवन शैली सुनिश्चित कराने के साथ-साथ उन्हें भविष्य के लिए भी एक बेहतर जीवन प्रत्याशा सुलभ कराने की दृष्टि के साथ संरक्षण का कोई भी प्रयास पर्याप्त समय रहते ही पूरा कर लिया जाना चाहिए। इसके अलावा हमें अपने युक्तिपरक तथा विवेकसम्मत हितों और सरोकारों की भी सुरक्षा करनी है क्योंकि सिर्फ पर्यावरणीय मसलों के चलते हम मौजूदा पीढ़ी से उसकी मूलभूत जरुरतों को पूरा करने या उन्हें बेहतर जीवन जीने के अधिकार से वंछित नहीं कर सकते। इसमें विकासपरक गतिविधियों के साथ ही जलवायु तथा पर्यावरण को बचाए रखने के सहकारी प्रयास भी किए जाने चाहिए। जलवायु परिवर्तन से जूझने के प्रयास आर्थिक विकास, उत्सर्जन की मात्राओं, तापमान से संभावित वृद्धि और जलवायु परिवर्तन की कीमत तथा इसके प्रतिकूल प्रभावों की बेहद चुनावों में फंसकर मिश्रित आर्थिक नीतियों के मसलों में उबाल ला देंगे।

विज्ञान और अर्थशास्त्र का समेकन

12.16 पिछली बहसों में उभर कर यह बात आई है कि हमें कठिन तकनीकी और अवधारणात्मक नीतिगत प्रश्नों का सामना करना ही होगा। इनमें सबसे अहम मसला साम्यता के सर्वमान्य सिद्धान्त (दुनियां के वायुमण्डलीय संसाधनों तक सभी की समान पहुंच) और सामान्य किन्तु विभेदीकृत दायित्व बोध (सीबीडीआर) को ध्यान में रखते हुए जीएचजी गैसों के स्थिरीकरण तथा उत्सर्जन तीव्रता के एक स्तर को चुनना है। जलवायु परिवर्तन पर खतरनाक दखलंदाजी पर एक आम समझ बनना अंतत: सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक और तकनीकी प्रकृति की ही होगी। सारणी 12.1 में पूर्व औद्योगिक स्तरों पर बढ़ा खगोलीय तापमान माध्य को विभिन्न स्तरों के लिए अनुवर्ती चार वर्षों तथा इन स्तरों पर स्थिर संघनन रेंज को दर्शाया गया है। यूएनएफसीसी के अनुच्छेद 2 में वायुमण्डलीय जीएचजी संघननों को एक नियत समय-सीमा के भीतर एक निश्चित स्तर तक स्थिर बनाए रखने का आह्वान किया गया है। जोकि निश्चय ही जलवायु प्रणाली में खतरनाक हस्तक्षेप को रोकने में सहायक होगा। जलवायु परिवर्तन सहित हर भयानक दखलंदाजी पर बनने वाली कोई भी समझ अंतत: प्रकृति से सामाजिक,

सारणी 12.1 : पूर्व औद्योगिक स्तरों पर खगोलीय तापमान माध्य के विभिन्न स्तर

श्रेणी	अतिरिक्त रेडिएटिव फोर्सिंग (डब्ल्यू/एम^2)	कार्बन डाई आक्साईड संप्रेषण (पीपीएम)	कार्बन डाई आक्साईड सूक्ष्म संघनन (पीपीएम)	उत्कृष्ट अनुमान जलवायु संवेदी (0 सें॰ग्रे॰) का उपयोग करते हुए पूर्व औद्योगिक स्तर पर वैश्विक तापमान मांध्य	कार्बन डाई आक्साईड उत्सर्जन के लिए तीव्र वर्ष	2000-2050 में उत्सर्जन के संदर्भ में वैश्विक कार्बन डाई आक्साइड में बदलाव	आकलित परिदृश्यों की संख्या
I	2.5-3.0	350-400	445-490	2.0-2.4	2000-2015	-85 to -50	6
II	3.0-3.5	400-440	490-535	2.4-2.8	2000-2020	-60 to -30	18
III	3.5-4.0	440-485	535-590	2.8-3.2	2010-2030	-30 to +5	21
IV	4.0-5.0	485-570	590-710	3.2-4.0	2020-2060	+10 to +60	118
V	5.0-6.0	570-660	710-855	4.0-4.9	2050-2080	+25 to +85	9
VI	6.0-7.5	660-790	855-1130	4.9-6.1	2060-2090	+90 to +140	5 (योग =177)

स्रोत : आईपीसीसीएआर4 के कार्यदल का अंशदान।

राजनीतिक, आर्थिक और तकनीकी होगी। सारणी 12.1 में सन्तुलन पर पूर्व-औद्योगिक स्तरों के ऊपर वैश्विक तापमान-माध्य के विभिन्न स्तरों के प्रतिरूपण के नतीजों तथा इनके अनुरूप इन स्तरों पर होने वाली कार्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जन तथा संघनन रेंज को दर्शाया गया है।

दुनिया में जीएचजी उत्सर्जन प्रवृत्ति

12.17 1945 से जीएचजी उत्सर्जन में तेज वृद्धि हुई है। विश्व संसाधन संस्थान 2005 में विश्व ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन (डब्ल्यू आर आई) के अद्यतन वर्ष अध्ययन के मुताबिक 2005 में कुल उत्सर्जित जीएचजी गैसों 44,153 मिलियन मीट्रिक टन कार्बन डाई-आक्साइड

बॉक्स 12.5 विश्व-व्यापी जीएचजी उत्सर्जन और ऐतिहासिक जिम्मेदारियां

जीएचजी की ऐतिहासिक जिम्मेदारियां जीएचजी की ऐतिहासिक और वर्तमान विश्व व्यापी उत्सर्जन की अधिकांश उत्पत्ति विकसित देशों में होती है। जबकि जीएचजी का विश्वव्यापी उत्सर्जन 1945 से बढ़ गया है, वही कार्बन-डाई-आक्साइड उत्सर्जन से हो रहे अधिकांश वृद्धि से, वैज्ञानिक इसे, ऐतिहासिक जीएचजी उत्सर्जनों के स्टाक के अलावा, जल परिवर्तन की विश्वव्यापी समस्या बताते हैं, न कि वर्तमान जीएचजी उत्सर्जन। अधिकांश देश, विशेषकर औद्योगीकृत देश, अधिकांशत: वर्तमान उत्सर्जन होने के कारण, सबसे बड़े ऐतिहासिक उत्सर्जक भी हैं तथा जलवायु परिवर्तन के लिए मुख्य योगदानकर्ता हैं। सबसे अधिक कुल उत्सर्जन करने औद्योगीकृत देशों का स्थान सबसे अधिक प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन करने वालों में भी है।

संचयी उत्सर्जनों का प्रतिशतता अंशदान

स्रोत : अर्थ ट्रेड (http://अर्थट्रेड.डब्ल्यूआरआई.आर्ग) वर्ल्ड विश्व संसाधन संस्थान द्वारा उपलब्ध सर्चएबल डाटाबेस रिजल्ट (http://www.wri.org)

के तुल्य थी। यही वह नवीनतम तथा अद्यतन वर्ष है जिसके सभी गैस तथा सभी देशों के व्यापक उत्सर्जन के आंकड़े उपलब्ध हैं। 2000 से 2005 के दरम्यान विश्व में कुल 12.7 प्रतिशत जीएचजी गैसों का उत्सर्जन हुआ था जोकि 2005 में कुल जीएचजी उत्सर्जन का 77 फीसदी हिस्सा था। इसके साथ ही मीथेन (15 प्रतिशत) और नाइट्रस ऑक्साइड (7 प्रतिशत) जैसी गैसें भी थी। 2005 में कुल विश्व पीएची उत्सर्जन का 18 प्रतिशत हिस्सा उतरी अमरीका, 16 प्रतिशत चीन और 12 प्रतिशत यूरोपीय यूनियन ने उत्सर्जित किया था। इसमें भारत की हिस्सेदारी महज 4 प्रतिशत रही थी। इतने ही महत्वपूर्ण संचयी उत्सर्जन के वे आंकड़े है जो विश्व तापमान की मौजूदा वृद्धि के लिए जवाबदेह है। (बॉक्स 12.5)

12.18 विश्व बैंक डाटाबेस में वर्ष 2008 तक के कार्बनडाईआक्साइड उत्सर्जन के आंकड़े हैं। चूंकि कार्बनडाइऑक्साइड सर्वाधिक प्रबल जीएचजी है, निरपेक्ष और प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन की दृष्टि से सभी देशों में कार्बनडाइआक्साइड उत्सर्जनों के बारे में 1992 में किए गए विश्लेषण की तुलना में 2008 में किया गया विश्लेषण उचित है। वर्ष 1992 में यूएसए का उत्सर्जन स्तर अन्य देशों के मुकाबले कार्बन डायओक्साइड के 4876 मि॰मी॰ टन के उच्चतम स्तर पर था। जहां 2008 में चीन का उच्चतम उत्सर्जन 7031 मिलियन मीट्रिक टन कार्बनडाईआक्साइड था, तथा अमेरिका 5461 मिलियन मीट्रिक टन कार्बनडाईआक्साइड के साथ दूसरे स्थान पर था। भारत का कुल उत्सर्जन स्तर 1742 मिलियन मीट्रिक टन कार्बनडाइआक्साइड था, रूस, जापान, जर्मनी और कनाडा आदि देश भी इसी के आस-पास थे।

12.19 प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन जो कि एक अलग ही तस्वीर पेश करता है ज्यादा महत्वपूर्ण है। 1992 और 2008 दोनों वर्षों में कतार का सर्वाधिक प्रति व्यक्ति उत्सर्जन क्रमशः 54.89 और 49.05 CO_2 टन था। 2008 में त्रिनिदाद और टोबेगो (37.39 CO_2 टन) कुवैत (30.11 CO_2 टन), ब्रुनेई दारुसलेम (27.53 CO_2 टन) और संयुक्त अरब अमीरात (24.98 CO_2 टन) का अनुगमन किया। उसके बाद जबकि चीन और भारत जैसे देश क्रमशः (5.30 CO_2 टन) और 1.52 CO_2 टन) के साथ 68 वें तथा 122वें स्थान पर हैं, ऑस्ट्रेलिया 13वें स्थान और जर्मनी 31वें स्थान, सर्वाधिक प्रति व्यक्ति सर्वाधिक CO_2 उत्सर्जन वाले देश हैं जो कि उनकी समग्र उत्सर्जन में परिलक्षित होता है (चित्र 12.2)

अंतरराष्ट्रीय ढांचा

12.20 जलवायु परिवर्तन का विषय अब मजबूती के साथ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय कार्यसूचियों में पब्लिक और मीडिया के छानबीन करने की शर्त पर शामिल किया जा रहा है और किए जाने वाले अनेक कार्यों की कार्ययोजनाएं भी बन रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय रूप से, यूएनएफसीसीसी (सम्मेलन) 1992 में स्थापित किया गया था तथा 1994 में लागू किया गया। समन्वित और प्रभावी कार्रवाई करने के लिए, विश्व की सरकारों के लिए संस्थाओं और प्रक्रियाओं का कार्यान्वित करने के संबंध में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम था। आज की तारीख तक, 195 देश इस सम्मेलन के पक्षकार हैं। इस सम्मेलन का अंतिम उद्देश्य वातारण में जीएसजी के संघननों (कॅनसेंट्रेशन्स) को ऐसे स्तर पर स्थित करना है जो जलवायु परिवर्तन प्रणाली से खतरनाक मानवजनित हस्तक्षेप का निवारण करेगा। यद्यपि, इसका विषय क्षेत्र विश्व व्यापी है, परन्तु संबंधित क्षमताओं, आर्थिक अवसंरचनाओं के आधार पर और संसाधन आधारों तथा 'साम्यता' जो जलवायु परिवर्तन परिचर्चा का मुख्य विषय है, के आधार पर पक्षकारों की प्रतिबद्धताएं/जिम्मेदारियां अलग-अलग है। इस प्रकार, वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों के संघनन पर किया जाने वाला कोई विचार-विमर्श, विश्व व्यापी वायुमंडलीय संसाधनों पर सभी की समान पहुंच के सिद्धांत जो देशों के विकास स्पेस निर्धारित करता है द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए। यह सम्मेलन विकसित देशों की ऐतिहासिक जिम्मेदारियों को ध्यान में रखते हुए, इन देशों के लिए कानूनी रूप से बाध्यकारी प्रतिबद्धताओं को निर्धारित करता है। इन प्रतिबद्धताओं को 1990 के स्तरों के संदर्भ में विकसित देशों द्वारा जीएचजी उत्सर्जन की कटौती के रूप में कार्यान्वित किया जाएगा तथा वित्त व प्रौद्योगिकी के संदर्भ में विकासशील देशों की सहायता

चित्र 12.2 कुछेक प्रमुख देशों के CO_2 उत्सर्जन (1992 और 2008)

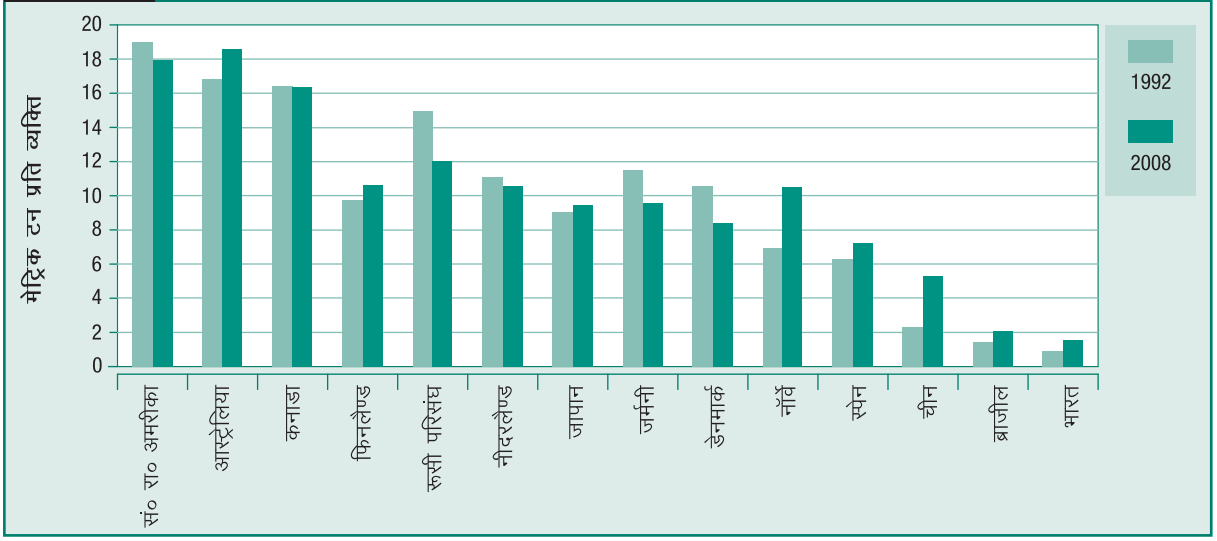

का प्रावधान किया जाएगा ताकि वे इन्हें गैसों आदि को कम करने और अनुकूलन विषयक वैकल्पिक उपाय करने में समर्थ हों। इस सम्मेलन में यह स्वीकार किया गया है कि आर्थिक व सामाजिक विकास एवं गरीबी उन्मूलन विकासशील देशों की ''प्रथम और अभिभावी प्राथमिकताएं'' हैं।

12.21 सम्मेलन ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्रवाई शुरू करने के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार की। जिसने 1997 में क्योटो प्रोटोकाल को जन्म दिया जिसमें एक निश्चित समय सीमा के भीतर विकसित देशों के लिए विधिक तौर पर बाध्यकारी परिमाणात्मक लक्ष्य निर्धारित किए गए थे। क्योटो प्रोटोकाल में विकसित देशों (प्रत्येक देश के लिए अलग तथा सभी के लिए संयुक्त रूप से) लक्ष्यों का एक सेट तैयार किया गया था। इस सेट के तहत उन्हें प्रथम वचनबद्धता अवधि (2008 से 2012) के दरम्यान 1990 के आधार स्तर से प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत के औसत से समग्रत: अपना उत्सर्जन घटाते जाना था। यह मानते हुए कि लक्ष्य हासिल करने की दिशा में अकेले घरेलू उपायों पर निर्भर रहना भारी पड़ सकता है, क्योटो प्रोटोकॉल ने तीन प्रणालियों के जरिए इस कार्यक्रम को पर्याप्त लोच व नम्यता प्रदान की गई। ये प्रणालियां (मेकेनिज्म), स्वच्छ विकास तंत्र मेकेनिक (सीडीएम), संयुक्त कार्यान्वयन (जेआई) और उत्सर्जन व्यापार (ईटी) थे। सीडीएम के माध्यम से औद्योगिक देश विकासशील देशों के वहनीय विकास में योगदान करते हुए वहां उपशमन परियोजनाओं को वित्तपोषित कर सकते थे। इस प्रकार की परियोजनाओं से प्राप्त धन को क्योटो प्रोटोकाल के तहत की गई वचनबद्धता को पूरा करने के लिए खर्च किया जाना था। जेआई के जरिए औद्योगिक देश अन्य औद्योगिक देशों में वित्तीय तौर पर समर्थित परियोजनाओं के द्वारा उत्सर्जन अंक अर्जित कर सकते थे। जबकि ईटी में देश को उक्त कोटों से ज्यादा उत्सर्जन की बात को स्वीकारते हुए अन्य देशों, जिनका कोटा प्रयोग नहीं किया था, से अप्रयुक्त कोटा खरीदने की बात कही गई थी। अमरीका को छोड़कर सभी प्रमुख देशों ने इन संशोधित क्योटो प्रोटोकाल विनियमों को स्वीकार कर लिया था।

एनेक्स-1 देशों, गैर-एनेक्स-1 देशों तथा भारत का उत्सर्जन विश्लेषण

12.22 यूएनएफसीसी ने सभी देशों को एनेक्स-I तथा गैर एनेक्स-I देशों में वर्गीकृत किया है हांलाकि सुस्पष्ट रूप से यह एनेक्स-I अर्थात विकसित और गैर एनेक्स-I अर्थात्-विकासशील देशों का वर्गीकरण नहीं है। मोटे तौर पर जलवायु परिवर्तन की शब्दावली में कहें तो एनेक्स-I पार्टियों का आशय उन औद्योगिक देशों से है जो जीएचजी उत्सर्जन को रोकने के लिए स्वयं तत्पर हुए हैं जबकि गैर एनेक्स-I देशों में वे विकासशील या इसी प्रकार अपेक्षतया कम विकासशील देश (एलडीसी) है जिन्होंने उत्सर्जन घटाने की कोई बाध्यकारिता नहीं दर्शायी है। क्योटो प्रोटोकाल के तहत 37 देशों ने स्वैच्छया जीएचजी उत्सर्जन नामत: कार्बनडाईऑक्साइड, (CO_2) मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड, (N_2O) सल्फर हेक्साफ्लोराइड (SF_6), हाइड्रोफ्लोरो कार्बन (HFC_s) और परफ्लर कार्बनों (PFC_s)के उत्सर्जन घटाने की प्रतिबद्धता जाहिर की है। विचार-विमर्श में सभी एनेक्स-I पार्टियां (अमेरिका सहित) 2008-2012 की अवधि के लिए 5.2 प्रतिशत वार्षिक की दर से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को सामूहिक रूप से घटाने के लिए तैयार हो गए हैं। यह घटोत्तरी 1990 के मुकाबले उनके वार्षिक उत्सर्जन के सापेक्ष होगी। चूंकि अमरीका ने प्रोटोकाल का अनुसमर्थन नहीं किया है अत: एनेक्स-I क्योटो देशों की सामूहिक उत्सर्जन घटोत्तरी 5.2 प्रतिशत सालाना से घटकर आधार वर्ष से 4.2 प्रतिशत तक सीमित रह गई है।

12.23 चित्र 12.3 एनेक्स-I, गैर एनेक्स-I तथा भारत आदि देशों के बीच (प्रतिव्यक्ति संदर्भों में) औसत कार्बन-डाईऑक्साइड के उत्सर्जन संघटन को दर्शाया गया है। वर्ष 1990-2008 के दरम्यान हम देख सकते हैं कि सामूहिक तौर पर वर्ष 1990 में एनेक्स-I पार्टियों का सर्वाधिक उत्सर्जन का स्तर 10.2 था कार्बन डाइ ऑक्साइड मीट्रिक टन प्रतिव्यक्ति था जोकि 2008 में घटकर 9. 7 कार्बन डाई ऑक्साइड मीट्रिक टन प्रति व्यक्ति हो गया है। इसी प्रकार गैर एनेक्स-I पार्टियों के मामले में देखें तो उनका उत्सर्जन स्तर 1990 में लगभग 2.8 कार्बन डाई ऑक्साइड मीट्रिक टन

चित्र 12.3 एनेक्स I, नॉन-एनेक्स I और भारत के CO_2 उत्सर्जन की तुलना

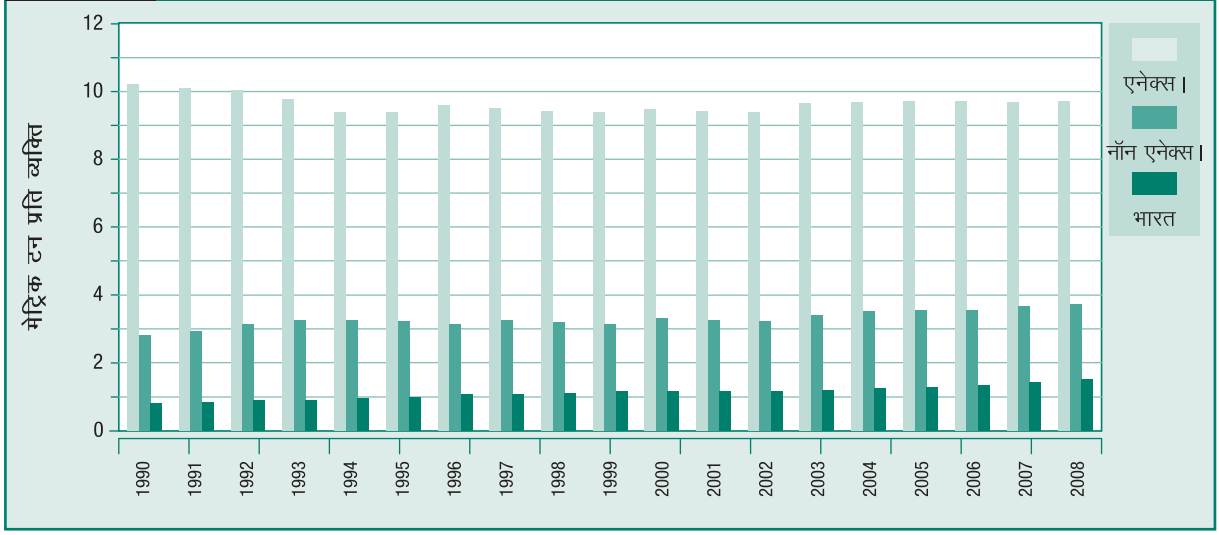

प्रतिव्यक्ति था जो कि 2008 में बढ़कर 3.7 कार्बन डाई ऑक्साइड मीट्रिक टन प्रति व्यक्ति स्तर पर आ पहुंचा है। भारत के लिए देखें तो 1990 में यहां का निम्नतम उत्सर्जन स्तर 0.81 कार्बन डाई ऑक्साइड मीट्रिक टन प्रतिव्यक्ति था जो कि 2008 में बढ़कर 1.52 कार्बन-डाई-ऑक्साइड मीट्रिक टन प्रतिव्यक्ति तक पहुंचा है।

क्योटो लक्ष्य तथा एनेक्स-I देशों द्वारा की गई सराहनीय प्रगति

12.24 क्योटो प्रोटोकॉल की पहली प्रतिबद्ध अवधि 2012 में समाप्त हो रही है। एनेक्स-I देशों द्वारा अपने लक्ष्यों को हासिल करने में की गई भारी प्रगति के लिए यह बहुत अच्छा समय है। अपने आधार वर्ष 1990 में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के सापेक्ष प्रत्येक एनेक्स-I पार्टी के लिए उत्सर्जन के अलग लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं (जिन्हें क्योटो-प्रोटोकॉल के एनेक्स-बी में दर्शाया गया है)। एनेक्स-बी उत्सर्जन लक्ष्यों और आधार वर्ष में पार्टियों के ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन क्योटो प्रोटोकॉल में पांच वर्षीय पहली वचनबद्ध अवधि (2008-2012) के लिए आरम्भिक तौर पर एक निर्दिष्ट राशि निर्धारित करेगा। आरम्भिक तौर पर निर्दिष्ट राशि की यह मात्रा अलग-अलग ईकाइयों को डोमिनेट करेगी जिसे निर्दिष्ट राशि (ए यू) कहा जाएगा। इसमें से प्रत्येक इकाई एक मीट्रिक टन

सारणी 12.2 : प्रमुख क्योटो पार्टियों (ईआईटीएस को छोड़कर) की परिमाणित उत्सर्जन सीमा तथा उनके द्वारा दर्शायी गई वास्तविक प्रगति

क्र॰ सं॰	पार्टी	1990 उत्सर्जन में जीएचजी ग्रीन गैस शामिल न करके उत्सर्जन/भूमि प्रयोग से हटाना भूमि प्रयोग परिवर्तन तथा वानिकी	परिमाणित उत्सर्जन सीमा या घटाने की वचनबद्धता (अवधि का आधार वर्ष का प्रतिशत)	ग्रीन गैस कार्बन-डाईऑक्साइड के समतुल्य 2009 जीएचजी उत्सर्जन स्तर	1990 से 2000 तक परिवर्तन (%)	2009 में क्योटो लक्ष्यों से विचलन (%)
1.	ऑस्ट्रेलिया	418470	+8	545858	30.4	22.4
2.	आस्ट्रिया	78171	-8	80059	2.4	10.4
3.	बेल्जियम	143344	-8	122440	-13.2	-5.2
4.	कनाडा	591262	-6	691834	17.0	23.0
5.	डेनमार्क	69391	-8	62323	-10.2	-2.2
6.	फिनलैण्ड	70369	-8	66344	-5.7	2.3
7.	फ्रांस	565987	-8	522403	-7.7	0.3
8.	जर्मनी	1247901	-8	919698	-26.3	-18.3
9.	यूनान	104565	-8	122724	17.4	25.4
10.	आईसलैण्ड	3441	+10	4649	35.1	25.1
11.	आयरलैण्ड	54820	-8	62395	13.8	21.8
12.	इटली	519157	-8	491120	-5.4	2.6
13.	जापान	1266553	-6	1209213	-4.5	1.5
14.	लाइनेतस्टिन	230	-8	247	7.8	15.8
15.	लग्जमबर्ग	12827	-8	11684	-8.9	-0.9
16.	मोनाको	108	-8	91	-15.7	-7.7
17.	नीदरलैण्ड	211852	-8	198872	-6.1	1.9
18.	न्यूजीलैण्ड	59112	0	70564	19.4	19.4
19.	नार्वे	49767	+1	51292	3.1	2.1
20.	पुर्तगाल	59424	-8	74660	25.6	33.6
21.	स्पेन	283168	-8	367548	29.8	37.8
22.	स्वीडन	72536	-8	60069	-17.2	-9.2
23.	स्विटजरलैण्ड	53122	-8	51949	-2.2	5.8
24.	ग्रेट ब्रिटेन संयुक्त गणराज्य और उत्तर आयरलैण्ड	779387	-8	570066	-26.9	-18.9
25.	संयुक्त राज्य अमेरिका	6166812	-7	6608227	7.2	14.2

स्रोत: यूएनएफसीसी।

टिप्पणी: * वे देश जिन्होंने क्योटो प्रोटोकॉल में सुधार न करने की अपनी मंशा घोषित कर दी है; जीजी का अर्थ गिगाग्राम है। ईआईटीज़ का अर्थ संक्रमणग्रस्त अर्थव्यवस्थाएं हैं।

कार्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जन के (टन कार्बनडाईऑक्साइड के समतुल्य) उत्सर्जन भत्ते को दर्शाती है। इस सारणी 12.2 में परिमाणित उत्सर्जन सीमाओं या क्योटो प्रोटोकॉल के एनेक्स-बी यथा निहित लक्ष्यों के साथ एनेक्स-I देशों (जिसमें संक्रमण अर्थव्यवस्था वाले देशों को शामिल नहीं किया गया है) द्वारा प्रदर्शित प्रगति को दर्शाया गया है। यदि 2009 के उत्सर्जन डाटा कुछ संकेत करते हैं तो इससे यह स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है कि कुछेक देशों को छोड़ ज्यादातर पार्टियों ने पहली वचनबद्ध अवधि के लिए नियत उदार क्योटो लक्ष्यों को मिस किया है।

12.25 यदि 2009 के उत्सर्जन आंकड़ों पर नजर डालें तो हम देखते हैं कि कुछेक को छोड़कर, ज्यादातर देशों में पहली प्रतिबद्ध अवधि के उधार क्योटो लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया है। वास्तव में कई देशों का उत्सर्जन 1990 के स्तर की तुलना में काफी ऊपर चला गया है जो कि वैश्विक जलवायु के लिए बुरी खबर है। उदाहरण के लिए कनाडा को अपने उत्सर्जन में 6 प्रतिशत घटोतरी करने का लक्ष्य दिया गया था जबकि उसने अपना उत्सर्जन 2009 में 17 प्रतिशत तक बढ़ा दिया अर्थात इसका आशय है उसने क्योटो लक्ष्यों से 23 प्रतिशत विचलन किया है। विकासशील देशों को अपने विकास के लिए प्रर्याप्त स्पेस मिल सके इसके लिए विकसित देशों द्वारा अपने उत्सर्जन घटाने की प्रतिबद्धता के बावजूद वास्तव में 1990-2009 के अवधि के दौरान उनके उत्सर्जन में तेजी से वृद्धि हुई है। विकासशील देश (अर्थात ब्राजील, चीन, भारत और मेक्सिको) ने जलवायु परिवर्तन के अलावा, अन्य कारणों के अपने उत्सर्जनों को तीन दशकों के दौरान लगभग 500 मिलियन टन कार्बन डायऑक्साइड को घटाया है। यह प्रोटोकाल के तहत अपेक्षित कटौती से कहीं ज्यादा है। (आईपीसीसी) के कार्यदल का अंशदान)

लघु द्विपक्षीय विकासशील राष्ट्रों (सिड्स), अल्प विकसित देश (एलडीसीज) भारत तथा अन्यों पर एक दृष्टि

12.26 जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से यूएनएफसीसी में होने वाले विमर्शों तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मंचों व अवसरों पर अपने सांझा हितों की वकालत करने तथा सांझा विमर्श की स्थापना के लिए प्राय: सभी देश अपने आपको छोटे-छोटे समूहों अथवा आंचलिक व क्षेत्रीय निकायों में बांट लेते हैं। ये समूह प्राय: विचार-विमर्श को गति देने की दिशा में उत्प्रेरकों का काम करते हैं। इसलिए कतिपय गैर एनेक्स-I देशों ने एक संगठन बनाया है और वह अवस्था जो कि अल्प विकासशील देशों को अस्वीकार्य हो सकती है, के पीछे एकजुट हो गए हैं। डरबन विमर्श में भी ये गतिशीलता और दबाव खुलकर सामने आए थे। सिड्स और एलडीसी भी ऐसे ही देशों के दो समूह हैं, चूंकि इन दोनों ही समूहों को पहले से ही जलवायु परिवर्तन के खतरों के लिए बेहद संवेदनशील और आशु-प्रभावित देश माना जा रहा था इसलिए ये देश जलवायु परिवर्तन के समूचे विमर्श के दौरान काफी सक्रिय और मुखर रहे थे। सिडस छोटे-छोटे द्वीपों और निचली सतह के तटीय देशों, जिनके लिए जलवायु परिवर्तन से जुड़े वहनीय विकास की चुनौतियां अपेक्षतया कमतर

सारणी 12.3: एसआईडीएस, सबसे कम विकसित देश तथा विश्व के अन्य देशों की तुलना (वर्ष 2007)

देश का नाम/क्षेत्र/समूह	सघउ प्रति व्यक्ति पीपीपी (चालू अर्न्तराष्ट्रीय $)	CO_2 उत्सर्जन (प्रति व्यक्ति मीट्रिक टन)	ऊर्जा उपयोग का प्रति इकाई सघउ (तेल समकक्ष की प्रति कि॰ग्रा॰ पीपीपी 2005 का स्थिरांक)	विद्युत ऊर्जा खपत (प्रति व्यक्ति कि॰ वाट)
पूर्वी एशिया एवं प्रशान्त	8116	4.85	4.74	2642
यूरोप तथा मध्य एशिया	23069	7.89	6.26	5558
यूरोपीय यूनियन	30710	8.01	8.02	6391
उच्च आय : गैर ओईसीडी	32610	14.31	5.55	8450
मध्य एशिया तथा अफ्रीका	9621	5.42	4.59	2292
उत्तरी अमेरिका	45608	18.31	5.50	13955
ओएफसीडी सदस्य	32998	10.73	6.72	8397
दक्षिण एशिया	2618	1.21	5.10	507
उप सहारा-अफ्रीका	2054	0.85	3.21	553
भारत	2854	1.43	5.06	563
अल्प विकसित देश	1271	0.24	3.91	149
एसआईडीएस औसत	10307	3.95	10.99	N.A
विश्व	10276	4.74	5.42	2851

स्रोत: विश्व बैंक डाटा (डाटा वर्ल्डबैंक ऑर्ग/इंडिकेटर)

हैं, से मिलकर बना है। सिडस के ज्यादातर देश लघु द्वीपीय राज्य संघ (एओएसआईएस) के सदस्य भी हैं तथा इसी प्रकार 12 देश ऐसे हैं जिन्होंने स्वयं को एलडीसीज़ के रूप में सूचीबद्ध करा रखा है 50 देशों को यूएन द्वारा नियमित रूप से यूएन प्रणाली के साथ मिल-जुल कर काम करने के लिए एलडीसी देशों के रूप में परिभाषित किया हुआ है। ये सभी देश जलवायु परिवर्तन को प्रक्रिया में सामान्यतया अपने हितों की रक्षा करने के लिए एकजुट होकर सक्रिय हो रहे है। इन विमर्शों में प्राय: भारत के विचारों उसकी भावनाओं को ज्यादा ध्यान से नहीं सुना गया तथा कवरेज भी अपेक्षया कम ही मिला। जबकि अपनी लम्बी समुद्र तटीय सीमाओं, द्वीपों की काफी संख्याओं और आजीविका के लिए प्राथमिक क्षेत्रों की निर्भरता जैसी वजहों के चलते भारत जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों के प्रति बेहद सर्तक और संजीदा रहा है। चूंकि सिडस और एलडीसीज़ देशों के साथ भारत भी जलवायु परिवर्तन के संभावित दुष्प्रभावों से बचने के लिए काफी संवेदनशील है इसलिए हमें यह देखना होगा कि ये देश जीडीपी, कार्बन-डाईऑक्साइड उत्सर्जन और ऊर्जा की खपत (सारणी 12.3) आदि संकेतकों के आधार पर दुनियां के मंच पर किस तरह से अपना पक्ष रखते हैं। भारत को भी उन्हें साथ लेना होगा व उनका साथ देना होगा।

12.27 जब हम विश्व की तुलना में भारत के प्रति व्यक्ति सघउ और सिड्स की तुलना करते हैं तब सामुहिक रूप से सिडान सदस्यों की जीडीपी बेहतर दिखाई देता है जो विश्व के औसत के नजदीक है। वहीं दूसरी ओर, भारत का प्रति व्यक्ति सघउ अत्यंत कम है। चित्र 12.4 और 12.5 स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि भारत और सबसे कम विकसित देशों में सिड्स सदस्य देशों की तुलना में प्रति व्यक्ति सघउ कमत्तर रही साथ ही प्रति व्यक्ति उत्सर्जन भी कमत्तर रहा है।

चित्र 12.4 भारत और विश्व के सिड्स, एलडीसी का CO_2 उत्सर्जन [1]

चित्र 12.5 पीपीपी के संदर्भों में भारत और विश्व के सिड्स एलडीसी का प्रति व्यक्ति जीडीपी [1]

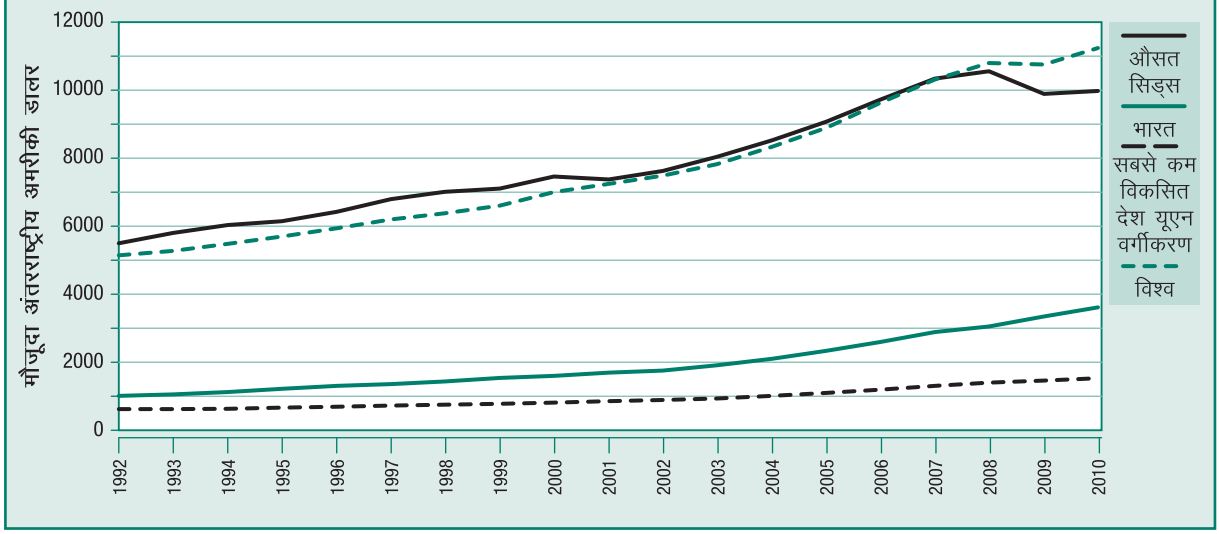

स्रोत: विश्व बैंक द्वारा (द्वारा वर्ल्ड बैंक आगे/इंडिकेटर)
प्रति व्यक्ति कार्बन-डाय ऑक्साइड और प्रति व्यक्ति जीडीपी के मामले में औसत सिड्स कुल 52 में से 33 सिड्स राज्यों के आंकड़ों को दर्शाता है और उपलब्ध सीमित आंकडों के कारण जीडीपी के मामले में 31 सिड्स देशों द्वारा प्रयुक्त ऊर्जा के औसत को दर्शाता है।

वार्ताओं की मौजूदा स्थिति

12.28 कान्फ्रेंस ऑफ पार्टीज़ (सीओपी) जो कन्वेंशन का सर्वोच्च निकाय है, सालाना बैठक का आयोजन करता है और इस कन्वेशन के कार्यान्वयन की समीक्षा करता है। दिसम्बर 2007 में बाली, इंडोनेशिया में आयोजित 13वें सीओपी, के दौरान अब 2012 तक और 2012 के बाद तक दीर्घावधिक सहकारी कार्रवाई के माध्यम से कन्वेंशन के संपूर्ण, प्रभावी तथा सतत कार्यान्वयन को समर्थ बनाने के लिए एक व्यापक प्रक्रिया, जिसे बाली कार्य योजना के नाम से जाना जाता है, आरंभ की गई थी। दिसम्बर, 2010 में कानकुन में हुए वार्ताओं के फलस्वरूप कुछ फैसले लिए गए हैं जो बाली कार्य योजना में तैयार की गई रूपरेखा के अनुसार कार्रवाई के विभिन्न क्षेत्रों, प्रशमन, अनुकूलन, तकनीक तथा वित्त, को कवर करते है। तथापि कानकुन करारों को व्यापक तौर पर आगे बढ़ने की दिशा में एक संतुलित कदम तथा बहुपक्षीय प्रक्रिया में विश्वास की पुन: पुष्टि के रूप में देखा जाता है।

12.29 हाल ही में, 28 नवम्बर से 10 दिसम्बर 2011 (कान्फ्रेंस ऑफ पार्टीज़ 17) को आयोजित डरबन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, जलवायु परिवर्तन वार्ताओं में एक महत्वपूर्ण अग्रगामी कदम है (बॉक्स 12.6)। डरबन के निष्कर्षों ने बाली कार्य योजना की उद्देश्य की पूर्ति हेतु महत्वपूर्ण योगदान दिया है क्योंकि उन्होंने क्योटो प्रोटोकाल के द्वितीय प्रतिबद्धता अवधि को सुस्थापित किया और उनसे हरित जलवायु निधि (जीसीएफ) प्रौद्योगिकी तंत्र (टीएम) और अनुकूलन फ्रेमवर्क संबंधी कुछेक प्रमुख कानकुन करार अमल में आए हैं। डरबन निष्कर्षों ने वैश्विक जलवायु परिवर्तन व्यवस्था हेतु 2020 के उपरांत की व्यवस्थाओं पर की गई परिचर्चाओं के लिए एक अवसर भी उपलब्ध कराया है जिसके लिए डरबन फ्रेमवर्क की शुरूआत की गई है। तथापि भारत और अन्य विकासशील देश डरबन में भारी दबाव में थे, तो भी भारत ने यह सुनिश्चित करने में अग्रणी भूमिका निभाई कि नई व्यवस्थाओं को कन्वेंशन में सुदृढ़ता से शामिल किया जाए और ये 'सर्वमान्य परन्तु विभेदक उत्तरदायित्व' और 'समदृष्टि' के सिद्धांतों पर आधारित हों। कानकुन में सभी पक्षों ने जलवायु परिवर्तन विचार विमर्श के लिए जिस सर्वसम्मति आधारित बहुपक्षीय व्यवस्था के प्रति आस्था पुन: व्यक्त की थी, डरबन में उसकी पुन: पुष्टि हुई। कानकून व्यवस्थाओं के विपरीत, जिन्हें बोलिविया द्वारा स्पष्ट रूप से अस्वीकृत किए जाने के बावजूद, अंगीकार किया गया था, डरबन के निष्कर्षों को सर्वसम्मति से अंगीकार किया गया। डरबन ने जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित विषयों पर निर्णय करने हेतु बहुपक्षीय मंच के रूप में यूएनएफसीसीसी वार्ताओं की सर्वोच्चता को पुन:स्थापित किया है।

बाक्स 12.6: प्रमुख डरबन निष्कर्ष

- डरबन कॉन्फ्रेंस की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि क्योटो प्रोटोकाल की द्वितीय वचनबद्धता अवधि की स्थापना करना है जो 1 जनवरी, 2013 को प्रारंभ होगी और दिसम्बर 2017 अथवा दिसम्बर 2020 को सम्पन्न होगी। विकसित देश क्योटो प्रोटोकाल पार्टियों हेतु उत्सर्जन सीमा और कटौती उद्देश्य (क्यूईएलआरओ) 2012 के दौरान इसी आधार पर निर्धारित किए जाएंगे।
- डरबन ने हरित जलवायु निधि (जीसीएफ) और अनुकूलन फ्रेमवर्क से संबंधित कानकुन करारों के प्रचालन में भी महत्वपूर्ण प्रगति की है। इसमें यह निर्णय लिया गया कि जीसीएफ को विधिक आधार और विधिक क्षमता प्रदान की जाए और इस निधि का कार्य सीओपी के मार्गदर्शन में हो। इसमें यह भी निर्णय लिया गया कि निधि को तेजी से प्रचालित किया जाए जिसके लिए वैश्विक पर्यावरण सुविधा (जीईएफ) और यूएनएफसीसीसी सचिवालय को जीसीएफ बोर्ड की सहायता के लिए अंतरिम सचिवालय की स्थापना के लिए कहा गया है।
- तकनीकी मैकेनिज्म और इनके संघटक अर्थात् जलवायु तकनीकी केन्द्र और कानकुन में स्थापित नेटवर्क (सीटीसीएन) और तकनीकी कार्यकारी समिति (टीईसी) के प्रचालन में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है।
- कानकुन में सहमत पारदर्शिता व्यवस्थाओं को डरबन में आगे बढ़ाया गया है और विकसित देशों के लिए सूचना दिए जाने वाले दिशानिर्देशों अर्थात् द्वि-वार्षिक रिपोर्ट और विकासशील देशों के लिए अर्थात् द्वि-वार्षिक अद्यतन रिपोर्ट को अंगीकार किया गया है। यह सुनिश्चित किया गया कि विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों के लिए रिपोर्टिंग और मापनीय, रिपोर्ट योग्य और सत्यापन योग्य (एमआरवी) प्रतिबद्धताएं अधिक कठिन न हों।
- डरबन का एक महत्वपूर्ण परिणाम वैश्विक जलवायु परिवर्तन व्यवस्था हेतु 2020 के बाद की व्यवस्थाओं पर चर्चा के लिए एक डरबन प्लेटफार्म प्रारंभ करना था। यह निर्णय लिया गया कि 2015 तक 2020 के बाद की व्यवस्थाओं को अंतिम रूप दिया जाएगा और 2020 से कार्यान्वित किया जाएगा। भारत ने यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है कि नई व्यवस्थाएं न ही एक प्रोटोकाल अथवा एक विधिक लिखत तक सीमित हो अपितु कन्वेंशन के अंतर्गत विधिक बल सहित एक सहमत परिणाम, का विकल्प भी इसमें शामिल किया जाए, इस प्रकार, यह सुनिश्चित किया गया कि 2020 के बाद के व्यवस्थाओं को अंतिम रूप देने के लिए हुई वार्ताओं के निष्कर्ष को कन्वेंशन में सुदृढ़तापूर्वक शामिल किया जाए और सीबीडीआर और समदृष्टि सहित इसके सभी सुस्थापित सिद्धांतों को लागू किया जाए। यूएनएफसीसीसी सचिवालय के प्रबंधन के अंतर्गत स्थापित किए जाने के लिए एक वेब-आधारित रजिस्ट्री पर भी सहमति प्रकट की गई। यह रजिस्ट्री विकासशील देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन मांगने अथवा स्वैच्छिक प्रशमन लक्ष्यों की प्राप्ति को मान्यता प्रदान करने हेतु उनके राष्ट्रीय दृष्टि से उपयुक्त प्रशमन कार्रवाइयों को अपलोड करने हेतु एक प्लेटफार्म का काम करेगी।
- सुरक्षोपायो पर किस तरह ध्यान दिया जाए और उनका पालन किया जाए इसके बारे सूचना उपलब्ध कराने हेतु प्रणालियों सम्बन्धी मार्गदर्शन और वन संदर्भ उत्सर्जन स्तरों और वन संदर्भ स्तरों के तौर तरीकों पर करार सहित वन कटाई तथा वन अवक्रमण और वनों के सुदृढ़ प्रबंधन (आरईडीडी+) से उत्सर्जन कम करने संबंधी मुद्दों पर डरबन में प्रगति हुई।

वार्ताओं में उठाए गए अति महत्वपूर्ण मुद्दे

12.30 कानकुन और डरबन में जलवायु परिवर्तन कान्फ्रेंसों ने जहां बाली कार्य योजना से संबंधित कुछेक मुद्दों के निराकरण के लिए प्रयास किया है, वही कई अति महत्वपूर्ण मुद्दे अनसुलझे रह गए हैं। इक्विटी, व्यापार से संबंधित मुद्दे और प्रौद्योगिकी से सम्बद्ध बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है और एक प्रभावी और सहयोगात्मक जलवायु परिवर्तन प्रणाली के संवर्धन हेतु उनका शीघ्र समाधान महत्वपूर्ण है। डरबन प्लेटफार्म के अंतर्गत एक नई प्रक्रिया की शुरुआत के परिप्रेक्ष्य में, यह और भी महत्वपूर्ण है कि जलवायु परिवर्तन के प्रति वैश्विक कार्रवाइयों को बढ़ाने हेतु की गई वार्ताओं में अनसुलझे पहलुओं का सीधे तौर पर निराकरण किया जाए।

12.31 समदृष्टि और सर्वमान्य किन्तु विभेदित दायित्वबोध (सीबीडीआर) के सिद्धांत जलवायु परिवर्तन के निराकरण के लिए किसी भी व्यवस्था के मूलभूत तत्व है। इस तथ्य पर विचार करते हुए कि जलवायु स्थिरीकरण की दिशा में एक वैश्विक लक्ष्य तय करते हुए ''सतत विकास के प्रति समतापरक पहुंच'' को सुनिश्चित करने हेतु कानकुन में सहमति हुई थी, वार्ताओं में समदृष्टि के सिद्धांत को उचित महत्व दिए जाने की आवश्यकता है, ताकि विकासशील देशों के हितों का पूरी तरह संरक्षण किया जा सके। डरबन प्लेटफार्म के अंतर्गत विकसित की जाने वाली 2020 के बाद की व्यवस्थाओं को समदृष्टि और सीबीडीआर के सिद्धांतों में शामिल किया जाना है।

12.32 यूएनएफसीसीसी में यह प्रावधान है कि जलवायु परिवर्तन के निराकरण के लिए कार्रवाई करते समय सभी देशों को खुले और समर्थक अंतरराष्ट्रीय व्यापार प्रणाली को बढ़ावा देना चाहिए और कोई भी स्वेच्छाचारी कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए। यह मुद्दा संरक्षणवादियों के अवरोध उत्पन्न करने और जलवायु परिवर्तन के नाम पर व्यापारिक हितों को आगे बढ़ाने और संरक्षित करने के उद्देश्य से किए गए उपायों का प्रयोग करने को ध्यान में रखते हुए अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है। यूरोपीय संघ द्वारा एक पक्षीय रूप से थोपी गई अपनी उत्सर्जन कारोबार योजना में नागरिक उड्डयन उत्सर्जनों के समावेशन जैसे क्षेत्रवार उपाय इसी श्रेणी में आते हैं। जलवायु परिवर्तन के समाधान हेतु बहुपक्षीय फ्रेमवर्क में वैश्विक स्तर पर इस प्रकार के एक पक्षीय और क्षेत्रक कार्रवाईयों की अनुमति नहीं दी जाती है जब तक कि सीबीडीआर के सिद्धांत का पूरी तरह से पालन नहीं किया जाता है। आगामी वार्ताओं में, यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि व्यापार मुद्दों का पर्यावरण संबंधी मुद्दों के साथ घालमेल ना हो और देश यह निर्णय लें कि यूएनएफसीसीसी के सिद्धांतों के अवहेलना में लिए गए जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए किए गए एक पक्षीय उपायों पर रोक लगाई जाए।

12.33 बाली कार्य योजना में इस बात को मान्यता दी गई है कि विकासशील देशों की कार्रवाईयों को आगे बढ़ाने के लिए विकास और जलवायु अनुकूल प्रौद्योगिकियों का हस्तान्तरण अति महत्वपूर्ण है। इसलिए, बीएपी देशों से यह आग्रह करता है कि 'वहनीय पर्यावरणीय प्रौद्योगिकियों के तीव्रतर इस्तेमाल, प्रसार और अन्तरण की कार्रवाई तत्काल करे। कानकुन में लिए गए निणयों के अंतर्गत जहां प्रौद्योगिकी मेकानिज़्म और जलवायु प्रौद्योगिकी केन्द्रों के नेटवर्कों की स्थापना की गई है, वहीं तकनीकियों और उनके आईपीआर के अंतरण संबंधी महत्वपूर्ण मुद्दो पर अब तक ध्यान नहीं दिया गया है। अब तक सहमति प्राप्त किए गए संस्थागत उपायों से ज्यादा से ज्यादा मौजूदा प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल हेतु क्षमता निर्माण में ही सहायता मिल सकेगी। ये उपाय वहनीय आधार पर तकनीकियों को उपलब्ध कराने और उनके बढ़ते उठाव को सुसाध्य बनाने में सहायक नहीं होंगे। इन प्रौद्योगिकयों हेतु सुसाध्यकारी आईपीआर व्यवस्था के अभाव में, कन्वेशन द्वारा इच्छित पैमाने और गति पर राष्ट्रीय दृष्टि से उपयुक्त प्रशमन और अनुकूलन कार्रवाइयों को आगे बढ़ाने का उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सकेगा। भविष्य में होने वाली वार्ताओं में इस मुद्दे पर प्रभावी ढंग से ध्यान देना होगा और इन प्रौद्योगिकियों के विकास और उन तक पहुंच को सुसाध्य बनाने के लिए एक उपयुक्त माडल विकसित करना होगा।

भारत और जलवायु परिवर्तन

भारत और जीएचजी

12.34 यद्यपि जीएचजी उत्सर्जनों के संदर्भ में भारत का नम्बर पहले पांच में आता है, लेकिन यदि पहले किए गए उत्सर्जनों को हटा भी दिया जाए तो भी विकसित देशों की तुलना में भारत का प्रति व्यक्ति उत्सर्जन बहुत कम है। उत्सर्जनों के उच्च स्तर का कारण यहां की बड़ी जनसंख्या, भौगोलिक आकार तथा बड़ी अर्थव्यवस्था है। भारतीय जलवायु परिवर्तन मूल्यांकन नेटवर्क (आईएनसीसीए) द्वारा मई 2010 में किए गए मूल्यांकन भारत के लिए उपलब्ध अद्यतन आंकड़े हैं। मूल्यांकन के अहम परिणाम यह हैं कि वर्ष 2007 में भारत से कुल निवल जीएचजी उत्सर्जन 1727.71 मिलियन टन CO_2 समसंयोजक (ई.क्यू.) हुआ, जिसमें से कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन 1221.76 मिलियन टन; मिथेन 20.56 मिलियन टन; तथा नाइट्रस डाइऑक्साइड 0.24 मिलियन टन था। वर्ष 1994 में, भारत का कुल निवल जीएचजी उत्सर्जन CO_2 ई.क्यू. 1228.54 था। यह 1994 से 2007 के दौरान 2.9 प्रतिशत की संयोजित वार्षिक वृद्धि दर को दर्शाता है (सारणी 12.04)। ऊर्जा, उद्योग, कृषि तथा अपशिष्ट क्षेत्रों से 2007 में हुए जीएचजी उत्सर्जन निवल CO_2 ई.क्यू. उत्सर्जनों का क्रमश: 58 प्रतिशत, 22 प्रतिशत, 17 प्रतिशत तथा 3 प्रतिशत गठित करते हैं। भूमि उपयोग, भूमि उपयोग परिवर्तन तथा वानिकी (एलयूएलयूसीएफ) सहित भारत के प्रति व्यक्ति CO_2 ई.क्यू. उत्सर्जन वर्ष 2007 में 1.5 टन प्रति व्यक्ति थे।

भारत के लिए जलवायु परिवर्तन के खतरे और संवेदनशीलताएं

12.35 जलवायु परिवर्तन का प्राकृतिक संसाधनों तथा लोगों की आजीविका पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इसके पर्यावरणीय तथा

सारणी 12.4 : 1994 से 2007 के बीच क्षेत्रों के जीएचजी उत्सर्जनों की तुलना

(CO_2 समसंयोजक के मिलियन टन में)

	1994	2007	सीएजीआर (प्रतिशत)
विद्युत	355.03 (28.4)	719.30 (37.8)	5.6
परिवहन	80.28 (6.4)	142.04 (7.5)	4.5
आवास	78.89 (6.3)	137.84 (7.2)	4.4
अन्य ऊर्जा	78.93 (6.3)	100.87 (5.3)	1.9
सीमेंट	60.87 (4.9)	129.92 (6.8)	6.0
लौह एवं इस्पात	90.53 (7.2)	117.32 (6.2)	2.0
अन्य उद्योग	125.41 (10.0)	165.31 (8.7)	2.2
कृषि	344.48 (27.6)	334.41 (17.6)	-0.2
अपशिष्ट	23.23 (1.9)	57.73 (3.0)	7.3
एलयूएलयूसीएफ के बिना कुल	1251.95	1904.73	3.3
एलयूएलयूसीएफ	14.29	-177.03	
एलयूएलयूसीएफ के साथ कुल	**1228.54**	**1727.71**	**2.9**

टिप्पणी: कोष्ठकों में दिखाए आंकड़े क्रमशः 1994 तथा 2007 में एल यू एल यू सी एफ के बिना कुल जी एच जी उत्सर्जनों के संबंध में प्रत्येक क्षेत्र से हुए उत्सर्जनों की प्रतिशतता दर्शाते हैं।

सामाजिक-आर्थिक संबंधित क्षेत्रों पर व्यापक प्रभाव होंगे। विभिन्न अध्ययन दर्शाते हैं कि भारत में कृषि, जल प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र, जैव-विविधता तथा स्वास्थ्य जैसे अहम क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील हैं। यह ठीक उसी समय हो रहा है जब वह भारी विकास जरूरतों से जूझ रहा है। भारतीय जलवायु परिवर्तन मूल्यांकन नेटवर्क (आईएनसीसीए) ने अहम सेक्टरों तथा भारत के क्षेत्रों पर होने वाले जलवायु परिवर्तन के प्रभाव पर 2010 में एक मूल्यांकन रिपोर्ट जारी की थी। इस रिपोर्ट में समुद्र के बढ़ते हुए जल स्तर, चक्रवाती तीव्रता में वृद्धि, वर्षा जल सिंचित फसलों में फसल पैदावार में कमी, पशुधन पर दबाव, दुग्ध उत्पादन में कमी, बाढ़ों में वृद्धि तथा मलेरिया के विस्तार के प्रभावों की चेतावनी दी गई है। इन परिवर्तनों से पैदावार में गतिरोध की मौजूदा तंगहाली, भूमि उपयोग व भूमि जल और अन्य संसाधनों हेतु भीषण प्रतिस्पर्धा के अतिरिक्त भारतीय कृषि पर दबाव पड़ने की संभावना है। कृषि में कोई भी अनिश्चतता खाद्य प्रणालियों को काफी अधिक प्रभावित कर सकती है और इस प्रकार संसाधनों के अभाव से जूझ रही गरीब जनसंख्या के एक बड़े तबके की संवेदनशीलता को बढ़ा सकती है। इसी वजह से जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से संवेदनशीलता में कमी लाने तथा क्षेत्र-विशेष उपायों और प्रयासों के माध्यम से अनुकूलन क्षमता में बढ़ोतरी करने के लिए तत्काल कार्रवाई किया जाना आवश्यक हो गया है।

12.36 भारत की खाद्य और पोषक सुरक्षा काफी हद तक गेहूं और चावल के उत्पादन, जो कि कुल खाद्यान्न उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत होता है, पर निर्भर है। सैमलेशन मॉडल का सुझाव है कि अनुकूलन और उर्वरकों लाभों की गैर मौजूदगी में तापमान में 1° सेंटीग्रेड की बढ़ोतरी ही अकेले गेहूं की उत्पादन में 6 मिलियन टन की कमी ला सकती है। दुग्ध उत्पादन जो कि हमारी खाद्य सूची में बहुत महत्वपूर्ण आइटम बन रहा है। डेयरी पशुओं के कारण वैश्विक जलवायु परिवर्तन से संबद्ध ऊष्मा दबाव के बढ़ने से प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता है। इसी प्रकार ग्लेशियरों के पिघलने, वर्षा के घटने, आबादी के लगातार बढ़ते जाने से जल उपलब्धता प्रभावित होगी और बढ़ती हुई आबादी पानी से संबंधित दबाव को और ज्यादा बढ़ाएगी। भारत के जंगल भी जलवायु परिवर्तन की सक्रियता और विविधता के चलते वन के स्वरूप को बदलने वाले हो जाएंगे और इस प्रकार वन उत्पादों पर आधारित आजीविकाएं भी प्रभवित होगी। जलवायु परिवर्तन के बाद स्वास्थ्य भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा। लू (गर्म हवाएं) छूआछूत से फैलने वाली बीमारियां, जल संक्रमण के प्रमुख प्रभाव हैं जो जलवायु परिवर्तन के कारण हो सकते हैं उदाहरण के तौर पर जैसे उष्ण कटिबंधीय देशों के समान, भारत भी छूआछूत से फैलने वाले रोगों जैसे मलेरिया, के बहुत व्यापक और तेजी से फैलने का अंदेशा है।

भारत की स्वैच्छिक कार्रवाई

12.37 भारत ने सतत विकास कार्यनीति के अनुपालन में अपनी संसाधनों के साथ स्वैच्छिक आधार पर पहले ही कई कार्रवाइयां की हैं। वर्ष 2009 में प्रकाशित एक रिपोर्ट, इंडियाज जीएचजी एमिशन प्रोफाईल : रिजल्ट्स ऑफ फाइव क्लाइमेट स्टडीज के अनुसार, 2030-31 में भारत में प्रति व्यक्ति जीएचजी का उत्सर्जन 2.77 टन और 5.00 टन Co2 ईक्यू॰ के बीच होंगे। पांच अध्ययनों में से चार का अनुमान है कि 2031 में भी भारत का प्रति व्यक्ति जीएचजी उत्सर्जन 4 टन Co2 ईक्यू॰ के भीतर होगा जो कि 2005 में 4.22 टन Co2 ईक्यू॰ के वैश्विक प्रति व्यक्ति उत्सर्जन की तुलना में कम है। इसका अभिप्राय यह है कि अब से दो दशकों के बाद भी भारत की प्रति व्यक्ति जीएचजी उत्सर्जन 25 वर्ष पूर्व के वैश्विक औसत से कम होगा।

12.38 भारत द्वारा किए गए महत्वपूर्ण उपाय निम्नलिखित हैं:

(i) भारत ने 2008 में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना को अपनाया है जिसमें प्रशमन और अनुकूलन दोनों उपाय हैं। आठ राष्ट्रीय मिशन जो एनएपीसीसी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में प्रमुख उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बहु-आयामी, दीर्घावधिक और समन्वित कार्यनीतियों का द्योतक है। अनुकूलन एनएपीसीसी का केन्द्र बिन्दु है। वहीं, दो मिशन सौर ऊर्जा और ऊर्जा क्षमता प्रशमन को कम करने हेतु बनाए गए हैं। संक्षिप्त उद्देश्यऔर लागत अनुमान बाद के खण्डों में दिए गए हैं। (देखें सारणी 12.5)

(ii) भारत ने 2020 तक 2005 के स्तर के 20-25 प्रतिशत तक के इसके सकल घरेलू उत्पाद के उत्सर्जन सघनता कम करने के घरेलू लक्ष्य की घोषणा की है। यह

बहु-क्षेत्र कम कार्बन विकास कार्ययोजना के माध्यम से हासिल किया जाएगा। इसका आशय यह है कि कम कार्बन धारणीय विकास बारहवें पंचवर्षीय योजना का केन्द्र बिन्दु होगा।

(iii) एनएपीसीसी के अतिरिक्त, सभी राज्यों को भी राज्य स्तरीय कार्य योजनाओं को तैयार करने के लिए कहा गया है। इन योजनाओं को स्वशासन के विभिन्न स्तरों पर एनएपीसीसी के विस्तार के रूप में चिह्नित किया है जो कि आठ राष्ट्रीय मिशनों से जुड़ा हुआ है। दिल्ली और गुजरात जैसे कुछ राज्य और हिमालयी राज्य पहले ही इस दिशा में आगे बढ़ चुके हैं और जलवायु परिवर्तन से निपटने में सक्रिय हो रहे हैं। दिल्ली ने एनएपीसीसी की तर्ज पर तैयार किए गए 2009-2012 हेतु जलवायु कार्य योजना प्रारंभ की है।

12.39 जलवायु परिवर्तन प्रशमन और अनुकूलन की प्रमुख नीतियों और कार्रवाईयां अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में और विविध सेक्टरों में व्याप्त हैं। प्रमुख क्षेत्रों में की गई पहलकदमियां निम्नानुसार है।

(i) ऊर्जा दक्षता

राष्ट्रीय वद्धित ऊर्जा दक्षता (एनएमईईई) ऊर्जा दक्षता हेतु सरकारी कार्रवाई का एक प्रमुख केन्द्र बिन्दु है। एनएमईईई को चार संघटकों में विभाजित किया गया है (क) निष्पादन, उपलब्धि और व्यापार (पीएटी)। यह ऊर्जा दक्षता प्रमाणपत्रों में कारोबार करने हेतु एक योजना है जो लगभग 700 औद्योगिक ईकाईयों को कवर कर लेगा और 2017 तक ऊर्जा की लगभग 17,000 मे॰वा॰ की बचत कर लेगा। यह योजना तमाम बड़ी औद्योगिक ईकाईयों हेतु आवश्यक है और तथापि ऊर्जा, अल्युमिनियम, सीमेंट, उर्वरक चारकोल, इस्पात, कागज लुगदी और वस्त्र को सुविधा प्रदान करता है। (ख) ऊर्जा दक्षता वित्त पोषण मंच। (ग) ऊर्जा दक्षता हेतु बाजार अंतरण। (घ) ऊर्जा दक्षता आर्थिक विकास हेतु फ्रेमवर्क। एनएमईईई, 19,000 मे॰वा॰ से अधिक की क्षमता वृद्धि से बचने की प्रत्याशा के साथ 2014-15 तक कोयला, गैस और पेट्रोलियम उत्पादों के रूप में लगभग 23 मिलियन टन तेल-समकक्ष की ईंधन बचतों को प्राप्त कर लेगा। कार्बन-डाय-ऑक्साइड (Co_2) के उत्सर्जन में सालाना 98.55 मिलियन टन की कमी होने का अनुमान है। एनएमईईई सरकार द्वारा चलाई जा रही पहली कार्य योजना नहीं है बल्कि एक प्रयास है जिसके माध्यम से ऊर्जा दक्षता से निपटा जा सकता है। ऊर्जा संरक्षण अधिनियम (2001) सरकार को यह बल देता है कि ऊर्जा उपभोक्ताओं हेतु मानकों के अनुपालन का सुनिश्चियन करे और ऊर्जा संरक्षण निर्माण कोड और ऊर्जा ऑडिटों को निर्धारित करे। इसके अलावा, ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (बीईई) द्वारा ऊर्जा मांग के प्रमुख क्षेत्रों में क्रियान्वित कार्यक्रमों की हर विशाल रेंज, जो कि ग्यारहवीं योजना अवधि के पहले चार वर्षों के दौरान 7665 मेगावाट की बिजली की बचत के रूप में परिलक्षित हुई है, भी लागू हुई है।

(ii) विद्युत संयंत्र

उत्सर्जन की गहनता को कम करने हेतु बारहवीं योजना में कोयला-आधारित क्षमता के 60 प्रतिशत और तेरहवीं योजना में 100 प्रतिशत उच्च ऊर्जा वाली तकनीकी लगाई जाएगी। अल्ट्रा सुपर क्रिटिकल पावर प्लांटस उच्च दक्षता को परिचालित करता है। पहले अल्ट्रा सुपर क्रिटिकल पावर प्लांट 2017 में आने की संभावना है। कुछ वर्षों के पश्चात् इस तकनीकी के बड़े पैमाने पर अपनाये जाने की योजना है जो कि भारतीय ऊर्जा क्षेत्र की उत्सर्जन गहनता को और भी कम कर सकेगा। ऊर्जा-सृजित करने वाली ईकाईयों के कोयला पर आधारित पुरानी और अकुशल ईकाईयों को हटाने की भी योजना है।

(iii) नवीकरणीय ऊर्जा

विद्युत अधिनियम 2003 (अधिनियम) राष्ट्रीय विद्युत नीति 2005 (एनईपी) और टैरिफ नीति (टीपी) नवीकरणीय स्रोतों से विद्युत उत्पादन के संवर्धन को आवश्यक मानती है। इस अधिनियम और नीतियों में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के संवर्धन हेतु विनियामक हस्तक्षेपों को भी शामिल किया गया है। केन्द्रीय विद्युत विनियमन आयोग (सीईआरसी) पहल नवीकरणीय ऊर्जा हेतु अधिमानित टैरिफ का निर्धारण करता है और भारतीय विद्युत ग्रिड कोड के माध्यम से ग्रिड कनेक्टीविटी के सुविधापरक फ्रेमवर्क का सृजन करने से लेकर नवीकरणीय ऊर्जा प्रमाणपत्र जैसे बाजार आधारित लिखतों का भी विकास करता है। आरईसी मेकनिज़्म नवीकरणीय ऊर्जा के संवर्धन करने में एक बड़े प्रयास के रूप में देखा जाता है और इस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित किया जाता है। इसका समाधान उच्च क्षमता वाले क्षेत्रों में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में लगाए जाने और संसाधन-घाटे वाले राज्यों द्वारा नवीकरणीय क्रय दायित्व (आरपीओ) के अनुपालन करने के दो उद्देश्यों का समाधान करता है। इस महत्वपूर्ण फ्रेमवर्क का सबसे पहले शुरूआत नवम्बर 2010 में की गई थी जो भारत में हरित ऊर्जा के विकास में नए युग की उद्घोषणा करता है।

(iv) नाभिकीय ऊर्जा

भारत वहनीय ऊर्जा स्रोत के रूप में नाभिकीय ऊर्जा की महत्ता को मानता है, इस संबंध में एक त्रि-चरणीय नभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम की रूपरेखा भी तैयार की गई है भारत की वर्तमान नाभिकीय क्षमता 4780 मेगावाट है और अनुमान है कि 2020 तक यह 20000 मेगावाट तक पहुंच जाएगा।

(v) परिवहन

भारत ने परिवहन क्षेत्र में उत्सर्जन गहनता कम करने हेतु आवश्यक कदम उठाए हैं। इस सम्बंध में की गई प्रमुख पहलों में से भारत चरण II, भारत चरण III और भारत चरण IV जैसे परिवहन उत्सर्जन मानदण्डों का स्तरोन्नयन किया गया है। बैटरी-चालित वाहनों के व्यवसायिक विनिर्माण ने भारत में कम गैर कार्बन उत्सर्जित वाले वाहनों को बढ़ावा देने की दृष्टि से शुरू किया है।

दिल्ली में भी कई वाहन पेट्रोल और डीजल से सीएनजी में बड़े पैमाने में परिवर्तित हो चुके हैं जो पहले से ही 50,000 से अधिक वाहनों में परिवर्तित हो चुके हैं। समन्वित परिवहन नीति (2001) एथानोल-समिश्रित पेट्रोल और जैव-डीजल को बढ़ावा देता है। राष्ट्रीय शहरी यातायात नीति वैयक्तिक वाहनों की अपेक्षा गहन सार्वजनिक परिवहन सुविधा (गैर मोटर चालित प्रकार सहित) के विकास और उपयोग पर बल देता है।

(vi) कृषि तथा वानिकी

इस शीर्ष के अंतर्गत, प्रमुख नीति पहलों में भारत की राष्ट्रीय वहनीय कृषि मिशन है। इसके अतिरिक्त, कृषि के विकास और सूखे से निपटने के लिए कई कार्यक्रम भी हैं। इस कार्य योजना ने वनों के संरक्षण के लिए कड़े कदम उठाए है। वन क्षेत्र में प्रति वर्ष 0.8 मिलियन हेक्टेयर की वृद्धि हो रही है और सालाना 10 प्रतिशत से अधिक ग्रीन हाऊस गैसों को निष्प्रभावी करने में मदद मिल रही है। भारत 10 मिलियन हेक्टेयर भूमि में वन की गुणता और प्रमात्रा को बढ़ाने हेतु एक महत्वकांक्षी ग्रीन इंडिया मिशन की शुरुआत कर रहा है। सभी राज्यों को धारणीय वन प्रबंधन हेतु केन्द्र सरकार द्वारा 1.2 बिलियन अमरीकी डालर की प्रोत्साहन-आधारित अतिरिक्त विशेष अनुदान देने की भी घोषणा की गई है। वानिकी के अन्य नीतियों और कार्यक्रमों में राष्ट्रीय वन नीति (1988), सहभागिता वन प्रबंधन/संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम, राष्ट्रीय वन रोपण कार्यक्रम, राष्ट्रीय वानिकी कार्ययोजना कार्यक्रम और वर्षा जल सिंचित क्षेत्र हेतु राष्ट्रीय जल संभरण विकास परियोजना शामिल है।

(vii) समुद्री और तटीय पर्यावरण

भारत में तटीय पर्यावरण में स्थिरता को सुनिश्चित करते हुए इनकी घनी आबादी वाली बसावट जो कि 7500 कि॰मी॰ से अधिक लम्बे तटीय क्षेत्र है को ध्यान में रखना आवश्यक हो जाता है। इन क्षेत्रों में की गई कुछेक प्रमुख पहलों में तटीय समुद्री अनुवीक्षण और अनुमान प्रणाली (सीओएमपीएस), तटीय क्षेत्र में भू-समुद्री हस्तक्षेप और समन्वित तटीय सामाजिक प्रबंधन (एस आई सी ओ एम) शामिल है।

(viii) ज्ञान और वैज्ञानिक अनुसंधान को बढ़ाने हेतु की गई पहलकदमियां

जलवायु परिवर्तन हेतु राष्ट्रीय सामरिक ज्ञान मिशन के अतिरिक्त, भारत ने आईएनसीसीए की स्थापना की है जो जलवायु परिवर्तन के विभिन्न पक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन करेगा। आईएनसीसीए ने हाल ही में भारत में जलवायु परिवर्तन के लिए 4x4 मूल्यांकन तैयार किया हैं जिसमें देश के चार परिस्थितिकीय क्षेत्रों में चार प्रमुख क्षेत्रों में कवर किया गया है और वर्ष 2007 हेतु जीएचजी उत्सर्जनों की सूची को अद्यतन किया गया है।

(ix) अनुकूलन क्षमता को बढ़ाना

जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति इसकी अनुकूलनशीलता बढ़ाने की भारत की कार्यनीति इसके अनेक सामाजिक और आर्थिक विकास कार्यक्रमों में परिलक्षित होती है। भारत जैसे विकासशील देशों के लिए अनुकूलन का लाभ अन्ततः आकस्मिक स्थितियों के दौरान कमजोर तबकों की सहायता करने और उनके जीवनयापन हेतु उन्हें सशक्त बनाने तथा दीर्घावधि में अनिश्चतताओं का सामना करने में मिलता है। भारत की कई सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं, जिनमें आजीविका सुरक्षा तथा कमजोर तबकों के कल्याण पर विशेष बल दिया गया है, का यही उद्देश्य है। भारत में विभिन्न मंत्रालयों/विभागों के अधीन केन्द्रीय सेक्टर की और केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रायोजित अनेकों योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं जिनका उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक विकास प्राप्त करना है। इनमें से बहुत सी योजनाओं में ऐसे तत्व (उद्देश्य और लक्ष्य) निहित हैं जो निर्णायक रुप से अनुकूलन के अनुरुप बनाए गए हैं। दूसरे शब्दों में, इस समय चल रही अनेक सेक्टरवार स्कीमों में अनुकूलन की दिशा में काफी कुछ किया जा रहा है। अनुकूलन-सम्बन्धित कार्यक्रमों पर इन अनुकूलन घटकों के साथ व्यय को मापने की कवायद की गई है; (क) फसल सुधार और अनुसंधान, (ख) गरीबी उन्मूलन और आजीविका परिरक्षण, (ग) सूखे से बचाव और बाढ़ नियंत्रण (घ) जोखिम वित्त पोषण (ड) वन संरक्षण (च) स्वास्थ्य (छ) ग्रामीण शिक्षा और अवसंरचना। यह पाया गया है कि इन अनुकूलन-अभिमुख योजनाओं पर भारत का व्यय 2000-01 में स घ उ के 1.45 प्रतिशत से बढ़कर 2009-10 के दौरान 2.82 प्रतिशत हो गया है। यह व्यय का काफी प्रभावी स्तर है और भारत में कार्यान्वित किए जा रहे आर्थिक और सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों की बहुलता का परिचायक है।

जलवायु परिवर्तन वित्त पोषण

12.40 वित्त पोषण के संदर्भों में, मुख्य निहितार्थों के साथ जलवायु परिवर्तन एक जटिल नीतिगत मुद्दा है। अन्ततः जलवायु परिवर्तन का निवारण करने की सभी कार्रवाइयों में लागत शामिल होती है। अनुकूलन तथा प्रशमन योजनाओं तथा परियोजनाओं को डिजाइन और कार्यान्वित करने के लिए भारत सरीखे देशों के लिए वित्तपोषण बहुत अहम है। समस्या भारत जैसे विकासशील देशों के लिए और अधिक गंभीर है जो अनुकूल होने की थोड़ी क्षमता के साथ जलवायु परिवर्तन की मार सबसे ज्यादा सहने वित्तपोषण विकास की आवश्यकता हेतु दिए जाने वालों में से एक होंगे। अधिकतर देश बेशक जलवायु परिवर्तन को वास्तविक खतरे के रूप में ही देखते हैं और अपने अधिकार में सीमित संसाधानों के साथ अधिक व्यापक और एकीकृत तरीके से इसका निवारण करने का प्रयास कर रहे हैं, लेकिन वित्तीय अर्थोपाय खोजने होंगे जिससे कि विकासशील देश जलवायु परिवर्तन का निवारण करने के अपने प्रयासों को बढ़ा सके, खासकर अपनी अनुकूलन क्षमता में बढ़ोतरी करते हुए। इस प्रकार, जलवायु परिवर्तन एक पर्यावरणीय मुद्दा और एक आर्थिक लागतों तथा विकास का मुद्दा दोनों है।

12.41 वित्तपोषण की कमी अनुकूलन योजनाओं को कार्यान्वित करने में एक बहुत बड़ी अड़चन है। विकासशील देशों द्वारा उनके घरेलू प्रशमन और अनुकूलन कार्रवाईयों को बढ़ाने हेतु वांछित वित्तीय सहायता की मात्रा और आकार यूएनएफसीसी के अंतर्गत बहुपक्षीय वार्ताओं में गहन परिचर्चा का विषय है। यह कन्वेंशन वायुमंडल में जीएचजी के स्टॉक में विकसित देशों के योगदान को ध्यान में रखते हुए वित्तीय सहायता के प्रावधान की जिम्मेवारी पूरी तरह विकसित देशों पर डालना है (बॉक्स 12.7)

12.42 यदि विश्व को स्थिरीकरण और सतत् विकास लक्ष्यों के अनुरूप उत्सर्जन मानकों को हासिल करना है तो भारत जैसे देश जो विकास के मार्ग पर प्रशस्त है को वित्त व प्रौद्योगिकी तक पहुंच बनाने की आवश्यकता होगी। कन्वेंशन और क्योटो प्रोटोकाल के अधीन इस समय उपलब्ध निधियां अनेक अध्ययनों द्वारा आकलित आवश्यकता की मात्रा की तुलना में काफी कम है यूएनएफसीसीसी ने जी एच जी उत्सर्जनों को 2030 में मौजूदा स्तर तक वापस लाने के लिए अतिरिक्त निवेश के तौर पर 200-210 बिलियन अमरीकी डॉलर की आवश्यकता होने का अनुमान लगाया है। इसके अलावा, अनुकूलन के लिए यूएनएफसीसीसी द्वारा 2030 में विश्वव्यापी रूप से 60-182 बिलियन अमरीकी डॉलर के अतिरिक्त निवेश की आवश्यकता होने का अनुमान लगाया गया है, जिसमें विकासशील देशों में होने वाले 28-67 बिलियन अमरीकी डॉलर का खर्च भी शामिल है। जैसा कि जलवायु परिवर्तन का निवारण करने के लिए विभिन्न अनुमान निधियों की विशाल राशि की ओर संकेत करते है। भारत समेत विकासशील देश यह बहस कर रहे हैं कि अनुकूलन और प्रशमन के लिए दीर्घ-आवधिक वित्तीय आवश्यकताओं से निपटने के लिए अतिरिक्त संसाधनों के लिए मुख्यत: जन स्रोतों से उत्पादन तथा लेखांकन के लिए एक वैश्विक मैकेनिज्म बहुत जरूरी है। कन्वेंशन के अंतर्गत एक बहुपक्षीय वित्तीय मैकेनिज्म होना चाहिए जिससे मूल्यांकित योगदानों के आधार पर विकसित देशों द्वारा उपलब्ध कराए गए संसाधनों से स्थापित किया जाए।

12.43 इस प्रयोजन हेतु वैश्विक स्तर पर उपयुक्त संस्थाओं और केंद्र की रूपरेखा बनाने के प्रयास किए जा रहे है। इस कन्वेंशन के अधीन जीसीएम की स्थापना, शीघ्र आरंभ निधियों (फास्ट स्टार्ट फंडस) के रूप में 30 बिलियन अमरीकी डालर, दीर्घावधिक वित्त के रूप में 100 बिलियन अमरीकी डालर (जुटाए जाएंगे) आदि की विकसित देशों की घोषणा से यह स्पष्ट है। तथापि, इस चुनौती से निपटने के लिए ये प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। दूसरी ओर, 'दीर्घावधिक वित्त के स्रोत' के संबंध में चर्चा को जी-20 मंच की ओर करने के लिए विकसित देशों द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं जहां नए एवं अभिनव लिखतों पर जोर दिया जा रहा है जिसके अंतर्गत विकसित और विकासशील देश सम्मिलित हैं। कई विकासशील देशों द्वारा बहुपक्षीय वार्ताओं में इस विचार का जोरदार विरोध किया गया है। वर्ष 2010 में संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा नियुक्त उच्च स्तरीय पैनल ने इनमें से कुछेक विषयों का समाधान करने के प्रयास किए थे परन्तु इसकी सिफारिशों, जो बाजार-संबद्ध लिखतों (लोक वित्तपोषण नहीं) और निजी-क्षेत्र संसाधनों पर निर्भरता के पक्ष में हैं, को बहुपक्षीय वार्ताओं में अनुकूल नहीं पाया गया है।

12.44 डरबन में, एक दीर्घावधिक वित्तपोषण संबंधी कार्य योजना शुरू की गयी है। इसका उद्देश्य 2012 के बाद जलवायु परिवर्तन वित्तपोषण जुटाने को बढ़ाने के लिए चल रहे प्रयासों में योगदान करना तथा वैकल्पिक साधनों सहित अनेक साधनों, सरकारी व निजी, द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय से संसाधन जुटाने के लिए विकल्पों

बॉक्स 12.7 : यूएनएफसीसीसी में वित्त संबंधी कुछ महत्वपूर्ण अनुच्छेद

अनुच्छेद 4.3 : ''अनबंध II में शामिल विकसित देश पक्ष और अन्य विकसित पक्ष विकासशील देशपक्षों द्वारा अनुच्छेद 12 पैरा 1 के अधीन उनके दायित्वों का अनुपालन करने में व्यय की गई सम्पूर्ण सहमत लागतों को पूरा करने हेतु नए व अतिरिक्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराएंगे, वे प्रौद्योगिकी के अंतरण सहित, ऐसे वित्तीय संसाधन भी उपलब्ध कराएंगे, जिनकी आवश्यकता विकासशील देश पक्षों को उन उपायों, जो इस अनुच्छेद के पैरा 1 के अंतर्गत आते हैं और जिन पर एक विकासशील देश पक्ष और अंतर्राष्ट्रीय निकाय अथवा निकायों जिनका उल्लेख, उस अनुच्छेद के अनुसार, अनुच्छेद 11 में हुआ है, के बीच सहमति हुई है, को कार्यान्वित करने के उपायों की सहमत पूर्ण वृद्धिशील लागतों को पूरा करने के लिए है।''

अनुच्छेद 4.5 : ''अनुबंध II में शामिल विकसित देश पक्ष और अन्य विकसित पक्ष अन्य पक्षों विशेषकर विकासशील देश पक्षों को पर्यावरणीय दृष्टि से सुदृढ़ प्रौद्योगिकियों और ज्ञान के अंतरण और उस तक पहुंच को बढ़ावा देने, सुसाध्य बनाने और वित्तपोषित करने के लिए सभी व्यावहारिक कदम उठाएंगे जिससे कि विकासशील देश कन्वेंशन के प्रावधानों को आपके यहां कार्यान्वित कर सकें। इस प्रक्रिया में, विकसित देश पक्ष विकासशील देश पक्षों की स्वदेशी क्षमताओं और प्रौद्योगिकियों के वकास और संवर्धन में सहायता करेंगे,।

अनुच्छेद 4.7 ''वह सीमा, जिस तक विकासशील देश पक्ष कन्वेंशन के अधीन अपनी प्रतिबद्धताओं को कारगर ढंग से कार्यान्वित करेंगे, विकसित देश पक्षों द्वारा कन्वेंशन के अधीन वित्तीय संसाधनों और प्रौद्योगिकी के हस्तान्तरण से संबंधित उनकी प्रतिबद्धताओं के कारगर कार्यान्वयन पर निर्भर करेगी और इसमें पूरी तरह इसका ध्यान रखा जाएगा कि आर्थिक और सामाजिक विकास तथा गरीबी उन्मूलन विकासशील देश पक्षों की पहली और अधिव्याप्त प्राथमिकताएं हैं,''।

अनुच्छेद 11.1 : ''प्रौद्योगिकी के स्थान्तरण सहित, अनुदान या रियायती आधार पर वित्तीय संसाधनों के प्रावधान हेतु व्यवस्था को एतदद्वारा परिभाषित किया जाता है। यह कांफ्रेंस ऑफ पार्टीज के मार्गदर्शन में कार्य करेगी और उसके प्रति जवाबदेह होगी, जो इसकी नीतियों, कार्यक्रम प्राथमिकताओं और इस कन्वेंशन से सम्बन्धित पात्रता मानदण्डों का निर्धारण करेगी। इसका प्रचालन एक अथवा अधिक विद्यमान अंतर्राष्ट्रीय निकायों को सुपुर्द किया जाएगा।''

के विश्लेषित करना है। इस कार्य योजना से संगत रिपोर्टें तैयार की जाएगी जिनके अंतर्गत जलवायु परिवर्तन वित्तपोषण संबंधी उच्च स्तरीय सलाहकार दल की रिपोर्ट तथा जी-20 के लिए जलवायु वित्तपोषण जुटाने संबंधी रिपोर्ट और इन रिपोर्टों में निर्धारण मापदंड सम्मिलित हैं।

12.45 एक जिम्मेदार देश होने के नाते भारत सतत विकास की नीति के अनुसार तथा अपनी क्षमताओं में रहते हुए घरेलू स्तर पर कार्रवाई करने का इच्छुक है। जलवायु परिवर्तन की दोषपूर्णता को दूर करने तथा संबंधित अनुकूलन पर देश के सकल घरेलू उत्पाद का एक बड़ा हिस्सा पहले से ही खर्च किया जा रहा है। घरेलू स्तर पर, देश में समावेशी विकास सहित लो-कार्बन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वित्तीय आवश्यकताओं के निर्धारण तथा संसाधनों के प्रावधान पर अनेक अंतर-मंत्रालयी मंचों पर बातचीत की जाती है। जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रधानमंत्री की परिषद राष्ट्रीय मिशनों में प्रस्तावित कार्यक्रमों की वित्तीय लागत का आकलन करती है। विशिष्ट राष्ट्रीय उपयुक्त न्यूनीकरण (एनएएमए) कार्य नीति एवं कार्यक्रम तैयार करने तथा उन्हें क्रियान्वित करने के लिए आवश्यक वित्तीय आवश्यकता और नीतिगत सहायता पर भी कार्य चल रहा है। योजना आयोग ने जलवायु परिवर्तन के संबंध में एक कार्यशील दल गठित किया है ताकि 12वीं पंचवर्षीय योजना के लिए सेक्टर संबंधी प्राथमिकताओं तथा उन्हें क्रियान्वित करने के लिए तौर तरीके चिहिन्त किए जा सकें। यह कार्यकारी दल एनएएमए तथा अन्य अनुकूलन कार्यों के लिए आवश्यक निधि की राशि अवधारित करेगा ताकि उन्हें 12वीं पंचवर्षीय योजना की सेक्टर संबंधी कार्यनीति में परिलक्षित किया जा सके। संसाधनों की कमी के मद्देनजर, सेक्टरों में प्राथमिकता का निर्धारण करना आवश्यक है।

12.46 विकासशील देशों की अनुकूलन व न्यूनीकरण आवश्यकताओं के एक बड़े हिस्से की पूर्ति अंतर्राष्ट्रीय वित्तपोषण का निर्धारण करके की जा सकती है। विकासशील देशों के लिए जलवायु परिवर्तन वित्तपोषण की अपेक्षित राशि जुटाना आने वाले समय में एक बहुत बड़ी चुनौती होगी। तथापि, जलवायु वित्तपोषण की मांग और पूर्ति के बीच अंतरों को पाटने के लिए, निजी क्षेत्र सहित वैकल्पिक साधनों का पता लगाया जा सकता है, पर विकासशील देशों को निधियों का पूर्वानुमान और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए, सरकारी वित्तपोषण एक मूल विषय रहना चाहिए।

12.47 वर्तमान परिदृश्य में, जलवायु परिवर्तन में वित्तपोषण के लिए भारत में उपलब्ध दो मुख्य माध्यम: 1, घरेलू साधन; 2, अंतर राष्ट्रीय साधन हैं।

घरेलू वित्त-साधन

12.48 भारत में, इस समय, अधिकांशत: घरेलू वित्त साधनों का उपयोग किया जा रहा है और उन पर निर्भर रहा जा रहा है जो अनेक सेक्टरों के लिए बजटीय आबंटन और कोयले पर 2010 में शुरू किए गए 50 रुपए प्रति टन की दर पर उपकर लगाकर राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा निधि हैं। यह राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा निधि स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकी वाली अभिनव परियोजनाओं में वित्तपोषण करेगी तथा फॉसिल-फ्यूल पर निर्भरता कम करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को काम में लाएगी। इस निधि से 200 करोड़ रुपए के आबंटन का प्रस्ताव पर्यावरणीय सुधार कार्यक्रमों के लिए तथा अन्य 200 करोड़ रुपए के आबंटन का प्रस्ताव ग्रीन इंडिया मिशन के लिए किया जा चुका है। इस उपकर से वनों की सुरक्षा और उनके पुन: रोपण की तथा प्रदूषित स्थलों को साफ-स्वच्छ रखने की योजनाओं के लिए भुगतान करने में मदद मिलेगी। अनुमान है कि कोयले पर स्वच्छ ऊर्जा उपकर से 2015 तक 10,000 करोड़ रुपए की राशि जुट जाएगी। सरकार द्वारा दिए जा रहे अन्य वित्तीय प्रोत्साहनों में शामिल हैं-हाईब्रिड व्हीकल्स के कुछ कल-पुर्जों को सीमा शुल्क से छूट और उनका घरेलू उत्पादन बढ़ाने के लिए 5 प्रतिशत की रियायती दर पर उत्पाद शुल्क कर लगाया जाना, लाइट इमिटिंग डाइोड्स (एफ॰ई॰डी॰) और सौर लालटेनों पर सीमा-शुल्क कम करना, तथा नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं को सब्सिडी देना। एनएपीसीसी ने वित्तीय परिव्ययों सहित महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में किए जाने वाले अनेक उपायों की रूपरेखा दी है (सारणी 12.5)। राज्य कार्ययोजनाओं, जो बनकर तैयार हैं, में भी अनुमानित लागत दी गयी हैं जो इसके अनेक मिशनों के क्रियान्वयन के लिए किसी मानक की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए, ओडिशा राज्य के लिए 5 वर्ष की अवधि के लिए 17000 करोड़ रुपए की संसाधन आवश्यकता का मोटे तौर पर अनुमान लगाया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय वित्त साधन

12.49 कार्य की महत्ता और निधियों की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए, वर्तमान और अनुमानित आवश्यकताओं के लिए घरेलू वित्त-साधनों के कम पड़ने की संभावना है। कन्वेंशन के बहुपक्षीय तंत्र के माध्यम से मिलने वाले वैश्विक वित्त-पोषण से, जलवायु संबंधी कार्यों में वित्त पोषण करने की घरेलू क्षमता बढ़ जाएगी। वित्तीय सहायता में आसानी के लिए, कन्वेंशन में एक वित्तीय तंत्र स्थापित किया है ताकि विकासशील देश पक्षों को निधियां प्रदान की जा सकें। इस समय, जीईएफ, जो कन्वेंशन के वित्तीय तंत्र का संचालन निकाय है, ऐसी परियोजनाओं, जो वैश्विक पर्यावरण, स्थानीय, राष्ट्रीय, एवं वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों को संयुक्त करने और सतत उपजीविकाओं के संवर्धन का फायदा पहुंचाती हैं, के लिए विकासशील देशों को अनुदान प्रदान करती है। लंबी वार्ताओं के पश्चात हाल में हुए डरबन सम्मेलन में जीसीएफ के डिजाइन को सीओपी द्वारा अंतिम रूप दिए जाने के साथ, यह आशा है कि भविष्य में जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से निपटने के लिए, जीसीएफ वित्त साधनों का मुख्य माध्यम

सारणी 12.5 : आठ मिशनों के अंतर्गत उद्देश्य और वित्तीय परिव्यय

क्र॰सं॰	मिशन/नोडल एजेंसी का नाम	राष्ट्रीय मिशनों की मुख्य विशेषताएं और स्थिति
1.	राष्ट्रीय सौर मिशन	सन 2020 तक देश में 20,000 मेगावाट की सौर बिजली मेगावाट संथापित करने का अनुरोध 1 पहला चरण चल रहा है। इसमें 1000 मेगावाट की क्षमता संस्थापित किए जाने की योजना है। चरण I मे कुल वित्तीय परिव्यय 4337 करोड़ रुपए अनुमानित है। चरण I के क्रियान्वयन की समीक्षा के बाद, चरण II कीआवश्यकता का आकलन किया जाएगा।
2.	राष्ट्रीय वर्धित ऊर्जा क्षमता मिशन	नई संस्थागत प्रणालियों को सृजित करना जिससे इनर्जी एफिष्एियेंसी बाजारों का विकास और उन्हें सुदढ़ किया जा सके। कई कार्यक्रम शुरू किए गए जिनमें सम्मिलित हैं बड़े उद्योगों के कारगरता संवर्धित करने के लिए पीएटी प्रणली, और सुपर-एफिसिएंस उपकरण लगाने के कार्य को तीव्र करने के लिए सुपर-एफिसिंएट उपकरण कार्यक्रम। इस मिशन के अंतर्गत 2010 से 2012 के बीच अनुमानित कुल आवश्यकता 425.35 करोड़ रुपए। इसका आशय इनर्जी एफिसिएंसी मार्किट में निजी क्षेत्र के निवेश को आकृष्ट करना है।
3.	राष्ट्रीय वहनीय पर्यावास मिशन	नगरों में वहनीय परिवहन, ऊर्जा अनुकूल भवनों, और वहनीय अपशिष्ट प्रबंधन की शुरूआत को संवर्धित करना। इस मिशन दस्तावेज में अनुमानित कुल लागत 1000 करोड़ रुपए परिलक्षित की गयी है।
4.	राष्ट्रीय जल मिशन	जल संसाधनों के एकीकृत प्रबंध का संवर्धन और जल के इस्तेमाल में 20 प्रतिशत तक किफायत को बढ़ावा देना। इस मिशन दस्तावेज के अनुसार, 11वीं और 12वीं पंचवर्षीय योजना अवधियों में, इस मिशन को क्रियान्वित करने के लिए अपेक्षित कुल अनुमानित अतिरिक्त निधियां 89,101 करोड़ रुपए हैं। इसके अंतर्गत राज्य आयोजनाओं और केंद्रीय आयोजना के माध्यम से क्रियान्वित की जा रही योजनाओं पर होने वाला व्यय भी सम्मिलित है।
5.	राष्ट्रीय हिमालयी पारिस्थिकी संवर्धन मिशन	हिमालयी पर्यावरण के लिए प्रेक्षणात्मक और मानीटरी प्रणाली की पारिस्थिकी संवर्धन स्थापना करना ताकि हिमालयाई हिम-खंडों (ग्लेशियरों) पर जलवायु मिशन परिवर्तन का अंदाजा लगाया जा सके और इन परिस्थितियों के समुदाय-आधारित प्रबंधन को संवर्धित करना। मिशन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 195 करोड़ रुपए की निधि की आवश्यकता है। कुछ व्यापक मिशन कार्यों को शुरु करने के लिए बारहवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 1100 करोड़ रुपए के बजट परिव्यय की आवश्यकता होगी।
6.	राष्ट्रीय ग्रीन इंडिया मिशन	वन भूमियों, बजट भूमियों और सामुदायिक भूमि के अतिरिक्त 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में वनरोपण का अनुरोध। अगले 10 वर्षों में 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में वनरोपण करने के लिए इस मिशन के अंतर्गत 46,000 करोड़ रुपए का व्यय अनुमानित है।
7.	राष्ट्रीय सतत कृषि विकास मिशन	कृषि पैदावार बढ़ाने तथा कृषि समुत्थान पर ध्यान देना ताकि मौसम, सूखे के लंबे दौर, बाढ़, और परिवर्तनीय आर्द्रता उपलब्धता की अत्याधिक मार को कम किया जा सके। इस मिशन के अंतर्गत प्रस्तावित अनुकूलन और कमीकरण कार्यों के लिए 1,08,000 करोड़ रुपए की अतिरिक्त बजटीय सहायता की आवश्यकता होगी जिसमें से, 91,800 करोड़ रुपए की आवश्यकता 12वीं पंचवर्षीय योजना में होगी।
8.	राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन संबंधी कार्यनीतिक ज्ञान मिशन	जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों को अभिज्ञात करना विकास को बढ़ावा देना और स्वास्थ्य, जन-सांख्यिकी, दूसरे स्थान पर बस जाना, और तटीय क्षत्रों में रहने वाले समुदायों की उपजीविका के क्षेत्रों में इन चुनौतियों के प्रत्युत्तर पर ज्ञान का प्रसार मिशन कार्यों को क्रियान्वित करने के लिए ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 150 करोड़ रुपए की अतिरिक्त निधियों की आवश्यकता है। मिशन 1 उप-मिशन कार्यक्रम के कार्यों की प्राप्ति के लिए बारहवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में 1050 करोड़ रुपए की व्यवस्था करने की आवश्यकता है।

होगा। बहुपक्षीय जलवायु परिवर्तन प्रणाली के अंतर्गत स्थापित विशिष्ट निधियां हैं। स्पष्ट जलवायु परिवर्तन संघटकों सहित विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक, अफ्रीकी विकास बैंक आदि द्वारा प्रशासित निधियां भी हैं।

त्वरित आरंभिक वित्त पोषण और दीर्घावधिक वित्तपोषण

12.50 सन् 2009 में कोपनहेगन में हुए सीओपी 15 के दौरान, विकसित देशों ने नए और अतिरिक्त वित्त साधन प्रदान करने की प्रतिज्ञा की थी जिसमें 2010-12 की अवधि के लिए 30 बिलियन

बॉक्स 12.8 : बहुपक्षीय जलवायु परिवर्तन प्रणाली के अंतर्गत स्थापित निधियां

विशेष जलवायु परिवर्तन निधि (एससीसीएफ) : इस निधि की व्यवस्था जीईएफ द्वारा की जाती है और वह अनुकूलन; प्रौद्योगिकी अंतरण एवं क्षमता निर्माण; ऊर्जा, परिवहन, उद्योग, कृषि वानिकी, एवं अपशिष्ट प्रबंधन; और आर्थिक विविधीकरण संबंधी परियोजनाओं में वित्त-पोषण करता है।

न्यूनतम विकसित देश निधि (एलडीसीएल): सर्वाधिक कम विकसित देश निधि राष्ट्रीय अनुकूलन कार्य योजनाएं (एनएपीए) तैयार करने एवं उनके क्रियान्वयन में सर्वाधिक कम विकसित देशों की मदद करने के लिए एक कार्ययोजना में सहायता करता है। दिसंबर 2011 की स्थिति के अनुसार, एलडीसीएफ ने परियोजनाओं के लिए लगभग 217 मिलियन अमरीकी डालर की राशि मंजूर की तथा सह-वित्तपोषण में 919 मिलियन अमरीकी डालर से अधिक की राशि जुटायी।

अनुकूलन निधि (ए॰फ॰): विकासशील देश पक्षों में ठोस अनुकूलन परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों में वित्तपोषण करने के लिए क्योटो प्रोटोकॉल के अंतर्गत यह निधि स्थापित की गयी थी। स्वच्छ विकास तंत्र परियोजना कार्यों और अन्य वित्तपोषण-साधनों पर प्राप्त आगमों के 2 प्रतिशत अंश से इस अनुकूलन निधि में वित्तपोषण किया जाता है। इस निधि का पर्यवेक्षण और प्रबंध अनुकूलन निधि बोर्ड (एएफबी) द्वारा किया जाता है। इस निधि की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषताएं ऐसी है कि उनसे पक्षों की निधि तक की सीधी पहुंच है जिससे अनुकूलन परियोजनाओं पर देश के स्वामित्व में वृद्धि हुई है।

ग्रीन जलवायु निधि (जीसीएफ): डरबन, दक्षिण अफ्रीका में आयोजित सीओपी 17 में, सीओपी ने विकासशील देशों में परियोजनाओं, कार्यक्रमों, नीतियों और अन्य कार्यों में सहायता करने के लिए इस कनवेंशन के अंतर्गत एक ग्रीन जलवायु निधि स्थापित की। यह निधि 2013 से काम करना शुरु कर देगी, जिसके लिए विकसित देश निधि की व्यवस्था करेंगे। 2020 तक 100 बिलियन अमरीकी डालर के दीर्घकालिक वित्तपोषण के बारे में देशों द्वारा निर्णय लिया गया है और आशा है कि जीसीएफ इसके महत्त्वपूर्ण हिस्से की व्यवस्था कर लेगा। जीसीएफ की मुख्य विशेषता यह है कि इसकी एक स्वतंत्र विधिक हैसियत एवं व्यक्तित्व होगा तथा राष्ट्रीस निर्दिष्ट प्राधिकारियों को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी है। कई दौर की भिन्न-भिन्न वार्ताओं के बाद यह प्राप्ति हुई है।

स्रोत: यूएनएफसीसीसी

अमरीकी डालर तथा कम करने और अनुकूलन के मध्य शेष आबंटन करने का आग्रह किया गया। दिसंबर, 2010 में कानकुन में हुए सीओपी ने विकसित देश पक्षों द्वारा दर्शित की गयी इस सामूहिक प्रतिबद्धता को ध्यान में रखा तथा पुन: इस बात की पुष्टि की कि सर्वाधिक कमजोर विकसित देशों जैसे सबसे कम विकसित देशों, एसआईडीएस, और अफ्रीका के लिए अनुकूलन हेतु वित्तपोषण को प्राथमिकता दी जाएगी। जबकि जलवायु परिवर्तन वित्त पोषण के बारे में चर्चा जारी है, वहीं वास्तविक रूप से धन का प्रवाह अपर्याप्त रहा है। जलवायु परिवर्तन संबंधी निधियों की अद्यतन स्थिति के अनुसार, प्रतिबद्ध 30 बिलियन अमरीकी डालर में से केवल लगभग 2.7 बिलियन अमरीकी डालर की राशि अब तक वृद्धि जलवायु कोष द्वारा विकासशील देशों के लिए संवितरित की गयी है। तथापि, इसमें बहुपक्षीय माध्यमों द्वारा सरकारी स्रोत से किया गया वित्तपोषण ही सम्मिलित है।

12.51 दीर्घावधिक वित्तपोषण एक ऐसा विषय है जो चल रही वार्ताओं का एक बड़ा हिस्सा रहा है। केंकन समझौता में 2020 तक प्रतिवर्ष 100 बिलियन अमरीकी डालर संयुक्त रूप से जुटाने की विकसित देश पक्षकारों की प्रतिबद्धता स्वीकार की गयी ताकि वैकल्पिक साधनों, सहित अनेक संसाधनों, सरकारी व निजी, द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय साधनों से विकासशील देशों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। डरबन में हुए सम्मेलन में, इन विषयों पर फिर विचार-विमर्श किया गया। सीओपी 17 ने इस विषय पर प्रगति करने के लिए 2012 में दीर्घकालिक वित्तपोषण के संबंध में एक कार्ययोजना क्रियान्वित किए जाने का निर्णय लिया। चिंता का एक अन्य विषय यह है कि कई अभिनव वित्त-साधन, उदाहरण के लिए विमानन कर जिस पर बातचीत चल रही है का भार विकासशील देशों पर डाला जा सकता है (बाक्स 12.10)। अत: बहुपक्षीय वार्ताओं में यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि (अभिनव वित्त-साधनों का) भार विकासशील देशों पर नहीं पड़ना चाहिए। ऐसा करना सीबीडीआर के सिद्धांत का उल्लंघन होगा।

निजी वित्त पोषण के स्रोत (साधन) और सीडीएम

12.52 सरकारी क्षेत्र से वित्तपोषण की व्यवस्था सहित, अनेक अनुकूलन और (दुष्प्रभाव) कम करने वाली परियोजनाओं की सहायता के लिए निजी वित्त पोषण का इस्तेमाल किया जा सकता है। जलवायु-रोधी अवसंरचना और अभिनव तथा वस्तुओं एवं सेवाओं, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से व्यक्तियों और समुदाओं की दुर्बलता को कम करें, के वितरण के संबंध में निधियां दी जा सकती हैं। जलवायु परिवर्तन निवेश परियोजनाओं के संबंध में निधि मार्ग के लिए पूंजी बाजारों का उपयोग किया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन संबद्ध स्वास्थ्य-देखरेख और प्राकृतिक आपदा जोखिमों के लिए बीमे के प्रावधान सहित, विकासशील देशों में कम आय वाले समुदाओं की सेवा करने के लिए जलवायु निवेश को बढ़ाने में, सरकारी निजी भागीदारी और माइक्रो-वित्तपोषण संबंधी योजनाओं का प्रयोग किया जा सकता है।

12.53 तथापि, ध्यान में रखी जाने वाली बात यह है कि निजी क्षेत्र प्रतिलाभों और लाभों से संचालित होता है और वह जलवायु परिवर्तन के प्रभाव कम करने वाली परियोजनाओं में अंशदान करके केवल अनुपूरक भूमिका निभा सकता है; अनुकूलन सरकारी क्षेत्र की जिम्मेवारी होगी और रहनी चाहिए। जलवायु परिवर्तन आवश्यकताओं के बारे में निवेशक समुदाय और वित्तीय संस्थाओं के मध्य जागरूकता बढ़ाना सरकारी वित्त-पोषण के प्रयोग सहित आवश्यक है ताकि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का सामना करने में सतत निवेश और परियोजना में योगदान करने के संबंध में निजी

बॉक्स 12.9 : जलवायु परिवर्तन वित्तपोषण संबंधी सलाहकार दल (एपीएफ) की रिपोर्ट पर टिप्पणी

संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने उच्च स्तरीय ए॰जी॰एफ की स्थापना 2010 में की ताकि विकसित देशों द्वारा जुटाई जाने वाली 100 बिलियन अमरीकी डालर की राशि के लक्ष्य को हासिल करने के लिए वित्तीय साधनों का पता लगाया जा सके। इस सलाहकार दल ने चार मुख्य शीर्षों के अधीन अनेक साधनों और लिखतों का पता लगाया है जो आवश्यक निधियां मुटाने में मदद कर सकते हैं। यह 10 अमरीकी डालर से 20-25 अमरीकी डालर और 50 अमरीकी डालर प्रति टन की दर पर कार्बन की कतिपय न्यूनतम लागत की धारणा पर आधारित है। इस रिपोर्ट में इस बात पर बल दिया गया है कि कार्बन का 20-25 अमरीकी डालर प्रति टन का मध्य लागत परिदृश्य प्रतिवर्ष 50 बिलियन अमरीकी डालर का लक्ष्य प्राप्त करने में एक मुख्य कारक होगा। मध्य लागत परिदृश्य के आधार पर उपलब्ध कराए गए अनुमान निम्नलिखित हैं:

प्राथमिक साधन	लिखत	बिलियन अमरीकी डालर (निवल)	बिलियन अमरीकी डालर (सकल)	अभ्युक्ति
1. सरकारी साधन	ऑक्शन ऑव इमिशन अलाउंस	8-38		बाजार का 2-10 प्रतिशत
	समंजन लेवी (2-10% की लेवी)	1-5		
	वैश्विक अंतरराष्ट्रीय विमानन और पोत कर	6-12		कुल का 25-50 प्रतिशत
	कार्बन-संबंधी राजस्व	28-33		
	1 अमरीकी डालर/टी Co2 समतुल्य का कार्बन कर 10			
	वापर प्रभार: 0.0004 अमरीकी डालर/केवीएच या कार्बन समतुल्य का 1 अमरीकी 5			
	फॉसिल फ्यूल सब्सिडी की कटौती 3-8			
	फॉसिल राल्टी का अनुप्रेषण 10			
	वित्तीय संव्यवहार कर (दर 0.001-.01 के बीच)	2-27		कुल का 25-50 प्रतिशत
	प्रत्यक्ष बजट अभिदान (विकसित देश)	उ.न.		
2. निजी क्षेत्र प्रवाह		20-24	200	
3. कार्बन बाजार समंजन		8-14	38-50	
4. विकास बैंक लिखित		11		38-50 प्रत्येक के लए प्रदत्त पूंजी में डालर, सकल 30-40 बिलियन अमरीकी डालर जुटाए जा सकते हैं
जोड़		**84-164**		

यूएनएफसीसीसी बाध्यता के अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों पर एजीएफ रिपोर्ट में कुछ नहीं है। इसमें यह उल्लेख नहीं है कि क्या विकसित देश बाध्यताएं निर्धारित अभिदानों या किसी अन्य स्रोत से पूरी की जानी चाहिए। प्रत्येक संस्तुत साधनों से राजस्व जुटाने के लिए किसी उपयुक्त डिजाइन का स्पष्टतया उल्लेख नहीं किया गया है। एजीएफ की सिफारिशें आवश्यकताओं को देखते हुए तैयार नहीं की गयी कि जुटाया जाने वाला वित्तपोषण पूर्णत: सरकारी हो या यूएनएफसीसीसी को स्वीकार्य किसी विशिष्ट बहुपक्षीय संस्था के माध्यम से जुटाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इसके एक और महत्त्वपूर्ण विषय, जिस पर संतोषजनक रूप से ध्यान नहीं दिया गया है, यह है कि क्या प्रतिवर्ष 100 बिलियन अमरीकी डालर जुटाने के लक्ष्य को सभी प्रवाहों के अनुदान समतुल्य या सभी प्रवाहों के सकल मूल्यों की धनराशि के रूप में देखा जाएगा।

एजीएफ रिपोर्ट में जलवायु परिवर्तन पर वित्तपोषण के लिए अनेक अभिनव साधनों और लिखतों का उल्लेख करने का प्रयास किया गया है तथा इसमें राजस्व संभावना के अनुमान दिए गए हैं जिनमें विकासशील आदेशों पर संभवत: पड़ने वाला कोई प्राथमिक भार सम्मिलित नहीं हैं। तथापि अभी भी ऐसे कुछ गौण प्रभाव हो सकते हैं। जिनका विकासशील देशों को कदाचित सामना करना पड़े उदाहरण के लिए डेडवेट क्षतियां या वितरण संबंधी प्रभाव (अंतर्राष्ट्रीय परिवहन और वित्तीय संव्यवहार कर)। उदाहरण के लिए, कुछ लिखतों की ढुलाई लागत में वृद्धि के कारण आयात की लागतें/कीमतें बढ़ सकती हैं। अत: यह सुनिश्चित करना कि विकासशील देशों के लिए कोई निवल भार नहीं है इन प्रभारों के वास्तविक भार पर ध्यानपूर्वक विचार किए जाने की आवश्यकता है—वह कौन है जिसे वास्तविक आय की पारिणामिक क्षति होगी। विकासशील देशों से संग्रहित राजस्वों की वापसी के लिए एक तंत्र की आवश्यकता होगी और उन्हें जलवायु परिवर्तन वित्तपोषण प्रवाह के रूप में नहीं माना जा सकता है। कार्बन आफसेट और कार्बन एक्सपोर्ट टैक्स जैसी लिखतों के संबंध में, पहले वाला इस कन्वेंशन के सिद्धांत का उल्लंघन करता है क्योंकि इसका बोझ विकासशील देशों पर पड़ता है और बाद वाला राजस्व के स्रोत के रूप में अर्हक नहीं होना चाहिए क्यों इससे उत्सर्जन की गणना दुगनी हो जाती है।

बॉक्स 12.10 : भारत और सीडीएम

31 दिसम्बर, 2011 की स्थिति के अनुसार, सीडीएम कार्यकारी बोर्ड द्वारा पंजीकृत कुल 3797 परियोजनाओं में से 776 भारत से हैं। यह अब तक विश्व में किसी देश के लिए परियोजनाओं की संख्या की दृष्टि से दूसरी सबसे बड़ी संख्या है। चीन पहले स्थान पर है जिसकी 1790 पंजीकृत परियोजनाएं हैं, तथा ब्राजील की 200 पंजीकृत परियोजनाएं हैं। इसके अतिरिक्त, 31 दिसंबर, 2011 की स्थिति के अनुसार, राष्ट्रीय सीडीएम प्राधिकरण (एनसीडीएमए) ने 2160 परियोजनाओं को हॉस्ट कंट्री अनुमोदन प्रदान किया है, परिणामस्वरूप, 364,034 करोड़ रुपए से अधिक के निवेश में आसानी हुई है। ये परियोजनाएं ऊर्जा मितव्ययता, फ्यूल स्वीचिंग, इंडस्ट्रियल प्रोसेसेज, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट, नवीकरणीय ऊर्जा और वानिकी के क्षेत्रों में हैं। यदि ये सभी परियोजनाएं सीडीएम कार्यकारी बोर्ड से पंजीकृत कराली जाती हैं, तो इनमें वर्ष 2012 तक 711 मिलियन सर्टिफाइड इमिशन कटौती (सीईआर) किए जाने की क्षमता है। 10 अमरीकी डालर प्रति सीईआर की अनुसार कीमत पर, वर्ष 2012 तक देश में लगभग 7.11 बिलियन अमरीकी डालर का कुल प्रवाह और हो जाएगा, यदि ये सभी परियोजनाएं पंजीकृत करा ली जाती हैं। आज की तारीख तक भारतीय परियोजनाओं को जारी सीईआर 124 मिलियन हैं।

दिल्ली मेट्रो रेल निगम (डीएमआरसी): सीडीएम योजना के अंतर्गत पंजीकृत किया जाने वाला विश्व का पहला रेल नेटवर्क:

डीएमआरसी विश्व का ऐसा प्रथम रेल नेटवर्क है जिसे सीडीएम योजना के अंतर्गत पंजीकृत किया जाएगा। आज की तारीख तक, डीएमआरसी ने दो परियोजनाएं (क) 29.12.2007 को पंजीकृत इमिशन रिडक्शन बाई लो जी एच जी इमिटिंग व्हीकल्स रिजनरेटिव ब्रेकिंग परियोजना के नाम से ज्ञात); और ख 30 जून, 2011 को पंजीकृत मेट्रो दिल्ली इंडिया (मॉडल शिफ्ट परियोजना के नाम से ज्ञात) पंजीकृत की हैं। आशा है कि आगामी 10 वर्षों के लिए रिजरेटिव ब्रेकिंग योजना से लगभग औसतन 41,160 सीईआर प्रतिवर्ष उत्पन्न होंगे तथा माडल शिफ्ट योजना से अगले 7 वर्षों के लिए लगभग औसतन 5,29,043 सीईआर प्रतिवर्ष उत्पादित होंगे।

निवेश प्रवाहों को जुटाने में मदद मिल सके। नीति निर्माताओं के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य उचित नीति प्रोत्साहन प्रदान करना है ताकि निजी वित्त पोषण बढ़ाने में मदद मिल सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि निजी वित्तपोषण प्रवाह, राष्ट्रीय विकास के उद्देश्यों के अनुरूप हैं।

12.54 भारत क्यूटो प्रोटोकोल के अंतर्गत सीडीएम का एक महत्त्वपूर्ण अंशदाता और लाभार्थी रहा है (बाक्स 12.10)।

चुनौतियां और संभावना

12.55 अल्प आय वाले देशों में सतत विकास करना एक दुष्कर संतुलित कार्य है। साथ ही साथ, समाज को समझौताकारी तालमेल सहित तीन कार्यों-वर्तमान पीढ़ी के लिए सामाजिक न्याय सहित आर्थिक उन्नति को सुधारना; भूमि, वायु, वन, ऊर्जा और जल संसाधनों के अधिक विवेक सम्मत इस्तेमाल के साथ व्यवस्था करना; और भावी पीढ़ियों की सुरक्षा करना, को पूरा करना है। विकासशील देशों में पसंद और मुश्किल कार्य है क्योंकि इनसे लोगों की उपजीविकाओं पर प्रभाव पड़ता है। अत: इसमें सफल होने के लिए एक ऐसी स्टीवर्डशिप की आवश्यकता है जो लोगों की आवश्यकताओं की अनुरूप हो, रुचियों और लागतों पर सूचना का आदान-प्रदान करें, और भागीदारी एवं स्वामित्व को सुनिश्चित करें।

12.56 भारत ने पिछले दशकों में प्रबंधकीय क्षमता के ऐसे क्षेत्रों में अच्छा कार्य किया है। 1980 से शुरू हुए आर्थिक सुधारों से विकास और आय में त्वरित वृद्धि हुई है। औसत आयु बढ़ने से सामाजिक उन्नति काफी हुई है। भारत ने वन जैसे अपने प्राकृतिक पर्यावरण को सुरक्षित रखने में योगदान बढ़ाया है। इसका विशेष विकास पथ, बेहतर भविष्य का वादा करते हुए त्वरित साक्षरता एवं शिक्षा सहित तीव्र विकास सेवाओं-लो इमिशन-इनटेंसिटी पर निर्भर रहा है। भारत हालांकि और बेहतर कर सकता था फिर भी काफी कुछ किया गया है। ऐसी प्रगति के कारण निसंदेह सुदृढ़ संस्थागत मूलभूत अवसंरचनाएं, लोकतांत्रिक भागीदारी, सामाजिक न्याय का संवैधानिक संरक्षण और पर्यावरणीय विधियों व विनियमों, बहुविध-कर्ताओं, बाजारों की लगातार अभिवृद्धि तथा सरकारी कार्यक्रमों और नीतियों का विस्तार है।

12.57 विकास की अपनी कार्बन तीव्रता को कम करना जारी रखते हुए भारत को फिर भी पर्यावरण टिकाऊपन सहित आर्थिक प्रगति के अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बचत करने और ज्यादा खर्च करने की आवश्यकता होगी। यह संभव और करनीय है। भूमि व कृषि, तीव्र नगरीकरण, लोक सेवाओं की क्वालिटी, सार्वजनिक पर्यावरणीय स्वास्थ्य पर अधिक तीव्र दबाव आ जाने तथा वायु व जल पर्यावरण बिगड़ जाने से नई संस्थागत चुनौतियां आ रही हैं। विभेदक कीमतें, प्रोत्साहन, विनिमय और करों को, विशेषकर ऊर्जा के क्षेत्र में, समर्थनकारी बनाए जाने की आवश्यकता होगी ताकि एक अधिक प्रभावी और साम्य विकास पथ की ओर जाने में मदद मिल सके। नए कार्बन-भिन्न, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत और प्रौद्योगिकियां महत्वपूर्ण होंगी, इनसे अधिकांशत: निजी क्षेत्र द्वारा संचालित की जाएगी। सामाजिक न्याय के लिए, एनर्जी एक्सेस और आठ राष्ट्रीय मिशनों के अन्य तत्वों पर अधिक सरकारी खर्च की आवश्यकता होगी।

12.58 विश्व परिप्रेक्ष्य में, भारत ने 2020 तक अपने विकास पथ की ऊर्जा इंटेंसिटी कम करने के लिए स्वैच्छिक प्रयास किए हैं। वह इस ध्येय की प्राप्ति की ओर अग्रसर है। तथापि विश्व समुदाय को इनके संबंध में समान और उचित भार को बांटने की अपनी प्रतिबद्धता को फिर से कहने की आवश्यकता है-धनी और गरीब देशों के बीच प्रतिव्यक्ति उत्सर्जनों में भारी अंतरों को कम करना तथा विकासशील देशों में व्यापक अनुकूलन एवं उत्सर्जन कम करने के प्रयासों के लिए वित्त बढ़ाना-ताकि विकसित राष्ट्र विकासशील देशों की कीमत पर पूरे कार्बन स्पेश का प्रयोग न करें। हाल में डरबन निर्णयों में, ग्रीनहाउस गैसों को कम करने के लिए देश प्रतिबद्धताओं के दूसरे दौर की वार्ताओं को शामिल किया गया तथा एक विश्व जीसीएम स्थापित की गयी। तीव्र क्रियान्वयन से लड़खड़ाती विश्वबद्धता तथा जापान और यूरोप में डांवाडोल होती

सरकारी वित्तीय सहायता, जो कठिन आर्थिक पर्यावरण और विमानन एवं समुद्रीय करों जैसे एकतरफा व्यापार उपायों की धमकी से और बिगड़ गयी है, की व्यापक धारणों को दूर करने में मदद मिलेगी।

12.59 यद्यपि डरबन सम्मेलन से कई सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं, पर अभी भी चिंता के कुछ क्षेत्र हैं। इनमें, किए जाने वाले भावी जलवायु परिवर्तन विचार-विमर्शों में विकासशील देशों के हितों की सुरक्षा के लिए और कार्य करना आवश्यक होगा। भारत के विचार दृष्टिकोण से कुछ चुनौतियां और प्रदान की जा सकने वाली सेवाएं हैं-क्योटो प्रोटोकॉल की दूसरी प्रतिबद्धता अवधि के लक्ष्यों को बिनाशर्त निर्धारित इमिशन सीमितता एवं कटौती उद्देश्यों (क्यूईएलआरओ) में बदलना; यूरोपीय यूनियन द्वारा अपनी घरेलू इमिशन्स ट्रेडिंग स्कीम, जो यूरोपीय यूनियन-भिन्न एयरलाइनों पर भी लागू होती है, में विमानन सेक्टर का यथाप्रस्तावित एकपक्षीय समावेशन जैसे विषयों का समाधान; और कदाचित उत्पन्न होने वाले अन्य विषय यदि उपायों का प्रयोग जलवायु परिवर्तन के आधारों पर विकासशील देशों के उत्पादों और सेवाओं के विरुद्ध किया जाता है। इमिशन्स पीक और कानूनी रूप से बाध्यकारी करार शीघ्र करने के लिए भारत पर बनाए जाने वाले दबाव का विरोध करने हेतु, विश्व पर्यावरणीय संसाधनों तक समान और उचित पहुंच संबंधी विषयों पर अधिक भलीभांतिपूर्वक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता होगी। कन्वेंशन के अधीन कानून बल वाले प्रोटोकोल/कानूनी लिखत या कोई सहमत परिणाम, जिसे डरबन प्लेटफॉर्म के अंतर्गत विकसित किया जाएगा, में सीबीडीआर और साम्यता के सिद्धांतों का सम्मान किया जाना चाहिए। साथ ही हमें यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि तदर्थ कार्यकारी दल सभी अनसुलझे मुद्दों को विशेषकर समानता के विषय को बोर्ड में रखे क्योंकि ये 2020 युग के बाद परिकल्पित की जाने वाली नई व्यवस्थाओं के अभिन्न हिस्से हैं। विकसित देशों द्वारा दीर्घकालिक वित्तपोषण प्रदान करने साधनों और माध्यमों को स्पष्ट रूप से अभिचिन्हित नहीं किया गया है। यह आवश्यक है कि वित्तपोषण के साधनों का शीघ्र पता लगा लिया जाए और जीसीएफ में उसके प्रचालनों के लिए आरंभिक पूंजी प्रदान की जाए। इसके अतिरिक्त, यह भी आवश्यक है कि डरबन प्लेटफॉर्म के अधीन विकसित की जाने वाली नई व्यवस्थाओं के हिस्से के रूप में वित्त-पोषण, प्रौद्योगिकी और क्षमता निर्माण प्रदान करने के लिए विकसित देशों की बाध्यताओं को कन्वेंशन के अंतर्गत सम्मिलित किया जाए। इसके अलावा, पूर्वानुयेय आधार पर आवश्यक संसाधनों को जुटाने और उनका प्रावधान करने तथा इस कन्वेंशन के वित्तीय तंत्र के साथ इन प्रणालियों के संबंध का समाधान किए जाने के लिए रह जाते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि प्रौद्योगिकी विकास और उसका अंतरण करने के संदर्भ में बौद्धिक संपदा अधिकार मामले पर बातचीत की जाती रहे। डरबन में हुए सम्मेलन में बौद्धिक संपदा अधिकार विषय पर कुछ नहीं कहा गया है।

12.60 भारत के परिप्रेक्ष्य से अन्य चुनौती, अंतरराष्ट्रीय परामर्श और विश्लेषण की नई प्रणाली से उत्पन्न होने वाले इसके (उत्सर्जन आदि को) कम करने संबंधी कार्यों की पारदर्शिता से इनके अभिवृद्धित कार्यों की तैयारी करने तथा भविष्य में किए जाने वाले वार्तालापों में, संसाधनों तक विकासशील देशों की समान पहुंच और विकसित देशों के घरेलू विधायन में वर्णित दंडात्मक कार्यों के प्रति गारंटी सुनिश्चित करने की है। भारत को भी आवश्यक घरेलू प्रणालियां स्थापित करने की आवश्यकता होगी ताकि उन्नत प्रौद्योगिकी एवं वानिकी संबंधी कार्यों के लिए की जाने वाली व्यवस्थाओं में कारगर ढंग से भाग लिया जा सके तथा उनसे फायदें प्राप्त किए जा सकें।

12.61 अंत में, जलवायु परिवर्तन एक विश्वव्यापी घटना है जिसका हमें, देशों की ऐतिहासिक जिम्मेदारियों और क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए सहयोग की भावना से समाधान करना है। भारत ने, अंतरराष्ट्रीय समुदाय का एक जिम्मेदार और प्रबुद्ध सदस्य होने के नाते, डरबन सम्मेलन की सफलता के संबध में अन्य विकासशील देशों के साथ मिलकर अपनी नम्यता दर्शायी है। डरबन में, विश्व ने विकासशील देशों के हितों की पूरी भावना से रक्षा करने के लिए भारत का एहसान माना है। भारत ने यह सुनिश्चित किया कि सामाजिक व आर्थिक विकास और गरीबी उन्मूलन के उद्देश्यों पर किसी भी प्रकार का कोई समझौता नहीं किया जाएगा। भले ही बातचीत की जाने वाली और 2015 तक अंतिम रूप दी जाने वाली व्यवस्थाएं 2020 तक हों या 2020 के बाद तक हो। आशा की जाती है कि विकसित देश सभी बकाया विषयों पर विकासशील देशों की चिंताओं का समाधान करके, डरबन में भारत द्वारा दर्शित नम्यता का आदान-प्रदान करेंगे। वार्तालाप सहमत निष्कर्षों से पूर्वाग्रहसित नहीं होने चाहिए। डरबन प्लेटफार्म के अंतर्गत परिणामों की कानूनी प्रकृति फॉर्म द्वारा नहीं बल्कि उनके मूल द्वारा निर्धारित की जाएगी।

12.62 समय व्यतीत होने के साथ अत्यधिक पर्यावरणीय दोषपूर्णता और असुरक्षा की सामान्य भावना से बचना मुश्किल हो गया है। इस पर्यावरणीय ह्रास का सीधा दंड गरीब और पहले से वंचित देशों को उठाना पड़ेगा। अत: इस संदर्भ में की जाने वाली प्रत्येक कार्रवाई सर्वाधिक कम विशेषाधिकार प्राप्त देशों की दृष्टि से देखी जानी चाहिए। इस विषय पर संपूर्ण विश्व समुदाय का कार्य करना होगा। कोई सहमत या बाध्यकारी प्रतिबद्धता से ज्यादा, ऐतिहासिक जिम्मेवारियों, विकास प्रक्रियाओं, गरीबी उन्मूलन के उद्देश्य और विभिन्न देशों के संसाधन प्रदान करने की क्षमताओं पर विचार करते हुए देशों के बीच उचित जिम्मेदारियों के विभाजन का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण है।